ISSN 2320-2858 UGC Journal No. 42684 जुलाई 2023
वर्ष - 11 अंक - 128

ब्रज लोक संपदा

सौजन्य : गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी, वृन्दावन

नवनिर्मित भवन उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद, मथुरा

~O bmH g|nXm

साहित्य, कला, संस्कृति, मानविकी एवं समाज विज्ञान की अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

संपादक :

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा

★

सह-संपादक :

चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

★

सहयोग :

डॉ. रश्मि वर्मा

★

कला संयोजन :

ब्रज ग्राफिक्स

कार्यालय :

ब्रज लोक संपदा कार्यालय, 302, गुरुकुल रोड, वृन्दावन

मो. : 09410619265, 7017709490

Website : www.brajloksampada.com ⋆ E-mail : brajloksampada@gmail.com

स्वामी मुद्रक एवं प्रकाशक

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा द्वारा चौधरी प्रिंटिंग प्रेस, ब्रह्मकुण्ड, वृन्दावन, मथुरा से मुद्रित कराकर 302, गुरुकुल मार्ग, वृन्दावन (मथुरा) से प्रकाशित।

ब्रज लोक संपदा भारतीय संस्कृति के मासिक शोध-पत्र की पृष्ठभूमि में हमारा यह सद् प्रयास है कि भारत की क्षेत्रीय कला व साहित्य का प्रज्ञात कलेवर परिवेषण कर राष्ट्रीय भावात्मक एकता के सूत्र को परस्पर संस्कृति के आदान-प्रदान से पुष्ट करें; इसी से व्यक्ति का व्यक्तिवाद शिथिल होकर समन्वित भाव से लोक अस्मिता के रूप में विकासोन्मुख नव जीवन का स्वरूप ग्रहण करेगा।

आवेदन - पत्र

कृपया मैं व्रजलोक संपदा पत्रिका का एक वर्ष का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। सदस्यता शुल्क.....नकद/चैक/ड्राफ्ट नं.....
दिनांक .....संलग्न है।

श्री/श्रीमती/.....

पिता/पति का नाम.....

जहाँ पत्रिका मंगाना चाहते हो वहाँ का पूरा पता .....

.....

पिन..... दूरभाष/मो०.....

हस्ताक्षर

(कृपया उक्त आवेदन पत्र को हाथ से लिखकर या टाईप कराकर भेज सकते हैं)

सदस्यता शुल्क

एक प्रति- 100/-, एकवर्षीय - 1100/-

विशेष: अपना चैक/ड्राफ्ट: श्रीश्री नरहरि सेवा संस्थान के नाम से
302, गुरूकुल रोड, वृन्दावन, मथुरा, उ.प्र., पिन: 281121 पर भेजें।

बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक
शाखा - प्रेम मंदिर के सामने, वृन्दावन
खाता संख्या - 41957705984
आईएफसी कोड - SBIN0016533

प्रकाशित आलेखों के विचारों से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
शोध पत्रिका से सम्बन्धित सभी विवाद केवल मथुरा न्यायालय के अधीन होंगे।

संपादकीय

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा

नाचत गोपाल संग, प्रेम सहित रास-रंग

विगत 15 जून 2023 से 15 जुलाई पर्यन्त रासलीला का प्रशिक्षण उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद मथुरा द्वारा संचालित गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी वृन्दावन के प्रेक्षागृह में सम्पन्न हुआ। प्रशिक्षण कार्यशाला में ब्रज के सुप्रसिद्ध रासलीला के मर्मज्ञ स्वामी घनश्याम जी व कत्थक प्रवक्ता भातखण्डे संस्कृति विश्वविद्यालय से पधारीं श्रीमती डॉ. मीरा दीक्षित जी। सभी ने मिलकर कार्यशाला में प्रतिभागियों को प्रशिक्षण काल में पुनः पुनः अभ्यास के द्वारा इतना आकर्षित रूप से तैयारी की। बीस किशोर बालक-बालिकाओं ने महावन रमणरेती स्थित रमण-बिहारी के प्रांगढ़ में सुशोभित रंगमंच पर वैरिन भई तू बंसुरी की अनुपम प्रस्तुति दी।

आज आवश्यकता है रासलीला के क्रम को अनवरत करने के लिये रासलीला जगत से संबंध महानुभावों को गंभीर चिन्तन करने के साथ इस प्रायोगिक रूप पर वैचारिक मंथन करने की।

गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी व भातखण्डे संस्कृति विश्व विद्यालय की यह संयुक्त कार्ययोजना थी। इस संदर्भ में रासलीला की कक्षाओं का भी सुयोग्य विषय मर्मज्ञों के दिशा-निर्देश में प्रारंभ किया जा रहा है। इससे रासलीला विधा का भविष्य तो अच्छा होगा ही साथ ही नवोदित कलाकारों का भी मार्ग प्रशस्त होगा।

अन्तर्वस्तु

1. श्रीमद्भगवद् गीता 05

2. श्रीमद्भगवद्गीता में दैवी-आसुरी सम्पदा का विवेचन 06
- डॉ. विद्या विन्दु सिंह

3. ब्रज विरासत की झलक उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद के नए भवन में 17
- चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

4. रासलीला प्रशिक्षण कार्यशलाा का सफल आयोजन 19
- चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

5. श्रीकृष्ण का ब्रज में पुनः-पुनः आगमन 21
- कपिल देव उपाध्याय

6. मुड़िया पूर्णिमा (गुरु पूजा का दिन) 29
- सुनील शर्मा

श्रीमद्भगवद्गीता

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते॥

कर्मों के फल में मेरी स्पृहा नहीं है,
इसलिये मुझे कर्म लिप्त नहीं करते–
इस प्रकार जो मुझे तत्त्व से जान लेता है,
वह भी कर्मों से नहीं बँधता॥4.14॥

श्रीमद्भगवद्गीता में दैवी-आसुरी सम्पदा का विवेचन

डॉ. विद्या विन्दु सिंह

श्रीमद्भगवद्गीता भारतीय संस्कृति का मूल आधार है। इसमें भारतीय चिन्तन, भारतीय जीवन-दर्शन का सार पुंजीभूत रूप से विद्यमान है। गीता में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की परम व्याख्या है, मानव कर्त्तव्य का उद्घोष है। यह मोह आसक्ति की निद्रा से जगाने का अभिनव जागरण मंत्र है। यह असत् से सत्, अंधकार से प्रकाश और मृत्यु से अमरत्व की ओर जाने का पथ प्रशस्त करती है। गीता पथ भी है, पथ प्रदर्शक भी और लक्ष्य भी। वैदिक काल से ही भारतीय साहित्य में संवाद शैली को अधिक प्रभावी माना जाता रहा है। श्री गीता संवाद शैली का अप्रतिम उदाहरण है। जिज्ञासु हैं वीर अर्जुन और समाधान करने वाले हैं स्वयं परमब्रह्म, परमेश्वर, योगेश्वर श्रीकृष्ण।

गीता उपनिषदों, षड्दर्शनों का सार तत्त्व है पर अपने आप में पूर्ण और विशिष्ट भी। यह प्राणि मात्र के कल्याण के लिए वरदान स्वरूप है। स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है-

यदा-यदा हि धर्मस्य, ग्लार्निभवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

(श्रीमद्भगवत गीताया चतुर्थोध्यायस्य सप्तः श्लोकऽस्ति)

गीता का उपदेश भी उन परिस्थितियों में हुआ, जब आसुरी शक्तियों का, तमोगुण का प्रभाव मानव के मन मस्तिष्क पर छा गया था। भरी सभा में द्रोपदी का चीरहरण अहंकार, क्रोध और अन्याय का सजीव उदाहरण है। ऐसी विषम परिस्थितियों में मनुष्य को सत् की रक्षा के लिए धर्म, युद्ध के लिए तैयार करना गीता का परम लक्ष्य है। गीता समस्त विश्व का धर्म ग्रंथ है, यह सभी धर्मो का आदर करने का संदेश देती है-

यो यो यां यां तनुंभक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव, विदधाम्यहम्।

(श्रीमद्भगवतगीता सप्तमोऽध्याय श्लोक 21)

(जो-जो सकामी भक्त जिस-जिस देवता के स्वरूप को श्रद्धा से पूजना चाहता है, उस-उस भक्त की मैं उस ही देवता के प्रति श्रद्धा को स्थिर करता हूँ।)

श्री गीता धर्म के वास्तविक स्वरूप की पहचान कराती है। धर्माचार के द्वारा उन दिव्य गुणों का प्रसार कराती है। जिसके द्वारा मनुष्य पशुता से मनुष्यत्व की, फिर देवत्व की प्राप्ति की ओर अग्रसर होने का प्रयास कर सकता है। यह मानवता के उदार गुणों की व्याख्या करते हुए उसके प्रति प्रेरित करती है।

श्रीमद्भगवत्गीता में कुरुक्षेत्र को धर्म क्षेत्र कहा गया है।

वामन पुराण में एक कथा है- महाराज कुरु इस क्षेत्र में स्वयं हल चलाकर धर्म की कृषि योग्य भूमि बना रहे थे। कृषि में वे धर्म की स्थापना करना चाहते थे। वह धर्म के आठों अंगों की (तप, सत्य, क्षमा, दया, शौच, दान, योग, अपरिग्रह) की कृषि का क्षेत्र बनाने की तैयारी कर रहे थे। उनकी इच्छा थी कि यह ऐसा क्षेत्र बन जाय जहाँ तप साधना करने या रहने मात्र से मानवीय गुणों का उदय हो और मनुष्य धर्मपुरुष बने। भूमि जोतते महाराज कुरु से देवराज इन्द्र ने पूछा- महाराज! धर्म बोने के लिए बीज क्या डालेंगे? महाराज कुरु बोले- बीज मेरे पास है। सभी देवताओं को जिज्ञासा हुई कि धर्म का बीज क्या होगा? कैसे होगी धर्म की खेती? भगवान विष्णु आये उन्होंने भी पूछा- धर्म का बीज कहाँ है? महाराज कुरु ने अपनी दोनों बाहें फैलाकर कहा कि बीज मेरे पास है। अर्थात कर्म ही धर्म का बीज है।

श्री विष्णु मर्म समझ गये और सुदर्शन चक्र से उनकी भुजाओं के सहस्र खण्ड कर दिये। वे खण्ड क्षेत्र में बो उठे। महाराज कुरु ने अपना पैर और मस्तक भी कटने के लिए झुका दिया उनके भी टुकड़े करके बो दिये गये।

श्री विष्णु ने उनके धर्मार्थ आत्मबलिदान से प्रसन्न हो कर वर दिया कि यह कुरु भूमि पवित्र और धर्ममय हो जाय। यहाँ आने वाले की मृत्यु नहीं मोक्ष होगा और उसे परम पद मिलेगा।

यह कथा प्रतीकात्मक अर्थ रखती है। मस्तक का कटकर बिखर जाना अहंकार का कट जाना है। भुजाओं, पैरों का कटकर बिछ जाना अपने कर्ता होने के दम्भ का छँट जाना है। अर्थात आत्मबलिदान, सर्वस्व अर्पण और त्याग आदि की भावना ही धर्म की उत्पत्ति का कारक है।

इस कथा का रूपान्तरित परिवर्तित भाव एक प्रसिद्ध लोकगीत में मिलता है:-

हमरे तौ राम-नाम धन खेती

मन कर बैल, ज्ञान हरवाहा, जब चाही तब जोती। हमरे.....

राम नाम कै बीज बोवायों, उपजत हीरा मोती। हमरे.....

यह राम नाम की खेती ही धर्म की खेती है, ज्ञान और भक्ति का चरम सुख है। इसमें उपजने वाले हीरा-मोती ही ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, मोक्ष, शांति सुख हैं।

गीता के सोलहवें अध्याय में दो दृष्टियों की चर्चा हैं। एक तो विषय भोगों को ही जीवन का चरम सुख मानने वाली प्रवृत्ति जो कभी तृप्त नहीं होती। दूसरी अध्यात्म दृष्टि जो विषय भोगों में आसक्ति न रखते हुए निर्लिप्त भाव से कर्म करने की हैं। इस सम्बन्ध में एक कथा का उल्लेख है :-

वर्मा के एक राजा थे थीबा, जो निर्लिप्त भाव से राज-काज करते थे। उन्हें राजा जनक की तरह विदेह कहा जाता था। असीम वैभव के स्वामी थे। उन्होंने बुद्ध की सम्यक दृष्टि प्राप्त कर ली थी।

एक बार एक भिक्षु आये और बोले- महाराज! आपके ज्ञान योग की बहुत प्रसिद्धि है पर आप तो इतने वैभव के बीच रहते हैं, फिर विरक्त कैसे?

राजा थीबा बोले- इस समय मै एक विशेष मंत्रणा में संलग्न हूँ। आप के प्रश्न का उत्तर मैं कुछ समय बाद दे पाऊँगा। तब तक आप मेरे अंत: पुर का वैभव देख आइये। मनोरंजन करिये, सुख साधनों का उपभोग, विश्राम करिये। और यह लीजिए दीपक, इसकी ज्योति न बुझने पाये, इसका ध्यान रखियेगा, क्योंकि इसकी ज्योति बुझते ही आप पथ भ्रष्ट हो जायेगें और आपके लिए मार्ग तलाश करना कठिन हो जायेगा।

भिक्षु चल पड़े। पूरा अंत:पुर देखकर सुरक्षित ज्योति लिये वापस लौटे। राजा ने पूछा- भिक्षुवर! कैसी लगीं मेरी अन्त:पुर की सुन्दरियाँ? नृत्यगान सुख मिला आपको? मधुरस पिया आपने?

भिक्षु बोले- महाराज! मैंने सुन्दरियों को देखा, मधुरस भी पिया और नृत्यगान भी देखा पर लगता है कि मैंने देखते हुए भी स्वाद नहीं लिया क्योंकि मेरा तो सारा ध्यान इस पर था कि दीपक न बुझ जाये।

राजा बोले- यही तो आत्म दृष्टि है, जो आपको मिल गयी।

भिक्षु का अंहकार गल गया और बात उनकी समझ में आ गयी कि निष्काम कर्म क्या है?

जैसे कमल पत्र जल में रहते हुए भी असम्पृक्त रहता है, वैसे ही यह कर्मयोग है।

भगवान अर्जुन से कहते है- कर्म सदैव करना चाहिए, बड़ों एवं श्रेष्ठ विचार वालों का अनुकरण करना चाहिए।

बड़ों के अनुकरण के सबंध में एक दृष्टांत है- एक अन्धा-बहरा व्यक्ति रोज सत्संग में जाता था किसी ने उससे पूछा आप न देख सकते हैं, न प्रवचन सुन सकते हैं तो आपको यहाँ आने से क्या लाभ मिलता है? उस व्यक्ति ने कहा कि यहाँ सत्संग के प्रभाव का एक प्रवाह है, इतने सारे लोग सुन रहे हैं, उनको लाभ मिल रहा है, उसका प्रभाव मुझ पर भी पड़ता है। दूसरी बात यह है कि मेरे बच्चे मेरा अनुकरण करके यहाँ आयेंगे तो उन्हें पूरा फल मिलेगा।

गीता का मुख्य उद्देश्य है फल की आशा छोड़कर कर्म करे। फल जो मिले उसे बाँट कर प्राप्त करे।

महाभारत में प्रसंग है- पाण्डव युद्ध जीतकर सिंहासनारूढ़ हुए। युधिष्ठिर को सभी मृत सम्बन्धियों का अन्तिम संस्कार करना था, युधिष्ठिर दुखी थे। सोच रहे थे, क्या सपने थे ? क्या कामनाएँ थीं ? सब खो गये।

अन्तिम संस्कार पूरे होने के बाद वे आत्मालोचन करने लगे। युद्ध में कितनी गलतियाँ हुईं ? कितना पाप हुआ ? प्रायश्चित का विचार मन में आया और तीर्थ यात्रा पर निकलने लगे।

व्यास जी ने कहा- मेरा कमण्डल लेते जाइये, इसे भी तीर्थों मे स्नान करा लाइयेगा।

तीर्थ से युधिष्ठिर वापस लौटे तो व्यास जी से बोले- तीर्थ करने के बाद भी मुझे शान्ति नहीं मिली।

व्यास जी ने कहा- मेरे कमण्डल को नहलाया कि नहीं ? पाँचों पाण्डवों ने कहा- हाँ, नहलाया था।

व्यास जी बोले- इस समय मेरे पास तुम लोगों को खिलाने के लिये कुछ नहीं है। इसी कमण्डल को तोड़कर तुम्हें प्रसाद देता हूँ। यह कहकर कमण्डल को तोड़ दिया और उसके टुकड़े खाने को दिया। सबने मुँह में डाला तो कड़वा लगा। प्रश्न उठा कि इतना नहलाने के बाद भी इसकी प्रकृति नहीं बदली। कड़वी लौकी की तुम्बी कड़वी की कड़वी रह गयी।

व्यास जी ने कहा- जिस प्रकार धोने से तुम्बी की प्रकृति नहीं बदली, जिस प्रकार सोना धोने से नहीं शुद्ध होता, आग में तपने पर शुद्ध होता है, उसी तरह मनुष्य भी केवल शरीर के नहलाने पर नहीं शुद्ध होता, जब तक कि मन की मैल को न धोया जाये, प्रकृति नहीं बदलती। तीर्थ में केवल शरीर धोने से पुण्य नहीं मिलता बल्कि अपनी आसुरी प्रवृत्तियों को छोड़ देने का संकल्प लेने से पुण्य मिलता है। वही ईश्वर भक्त कहलाने योग्य हैं जो गीता में वर्णित दैवी सम्पदा के गुणों से युक्त है।

आसुरी सम्पदा के बारे में भगवान इसलिये बताते हैं, क्योंकि उसके बारे में ज्ञान होने पर ही उससे स्वयं को बचाया जा सकता है। आसुरी सम्पदा दैवी सम्पदा के विपरीत हैं। वह सांसारिक मायाजाल की ओर प्रेरित करती है। सत्-असत् का विवेक नहीं रहने देती। ईश्वर की सत्ता में विश्वास न रखने के कारण धर्म या ईश्वर का भय नहीं रहता और धर्म विरुद्ध कार्य होता रहता है। जिसके कारण मोक्ष से दूर बंधनों में लिप्त रहता है प्राणी। नरक के चारों द्वार काम, क्रोध, लोभ, और मोह उसकी ओर स्वयं बढ़ते जाते है। अपने अहंकार, अभिमान, अन्याय और लोलुपता के कारण वह सभी को दु:ख पहुँचाता है और स्वयं भी अशान्त रहता है।

आज की युगीन परिस्थितियों में अहिंसा भाव ही कितना अपरिहार्य है। हिंसा किसी भी तरह से किसी को कष्ट पहुँचाना है, मन, वचन, कर्म, तीनों से हिंसा भाव नहीं हो, तभी अहिंसा है। हम दूसरों की आवश्यकता, पीड़ा समझेंगे तो हिंसा कर ही नहीं पायेंगे। धर्म को खुली आँखों से देखने की भी जरूरत है। अन्याय का प्रतिकार करने के लिए की गयी हिंसा अधर्म नहीं है।

स्वामी विवेकानन्द ने एक उदाहरण देकर बात समझायी है- एक सामान्य नागरिक किसी की हत्या कर दें तो वह पाप व दण्ड का पात्र है किन्तु एक सैनिक जितने अधिक प्रतिपक्षी मानवों का वध करता है तो वह प्रशंसा का पात्र है, क्योंकि उस समय वह अपना कर्त्तव्य कर रहा होता है। गीता पुरुषार्थ का, ओज का, तेज का ऐसा काव्य है जिससे पूरे विश्व को प्रकाश मिलता है।

जो मानव ईर्ष्या रहित होकर श्रद्धा के साथ इस पवित्र संवाद को सुनेगा वह मुक्त होकर पुण्यात्माओं के आंनद लोक में पहुँच जायेगा। गीता हमें बताती है कि ईश्वर पर सब छोड़ दो, तब वह तुम्हारी चिंता करेगा। तुम्हें चिंता करने की जरूरत नहीं होगी। वही दुखों से पार ले जायेगा, वही दुखों से ऊपर उठायेगा। जब मानव नि:शब्द ईश्वर की प्रतीक्षा करता है तो वह स्वयं सहायक बनने आता है।

भक्ति के दो स्वरूप हैं। भगवान के सहारे हो जाना मार्जारी भक्ति है। बिल्ली के बच्चे को माँ स्वयं उठाकर चलती है। 'वानरी भक्ति' में बच्चा स्वयं माँ से चिपका रहता है।

गीता का नित्य पाठ और मनन होना चाहिए क्योंकि जैसे पानी बहते-बहते पत्थर पर भी निशान छोड़ देता है, उसी प्रकार नित्य अभ्यास से जड़ में भी चेतना आती है। अच्छे प्रभाव यदि गहरे न हों तो टूट भी जाते हैं और आसुरी भावों का प्रभाव पड़ने लगता है। इसलिये अच्छे प्रभाव की मोर्चाबन्दी जरूरी है।

गीता धर्म और कर्म को एक मानती है। वर्णाश्रम धर्म जो है, वही वर्णाश्रम कर्म है। कर्म का अर्थ कर्त्तव्य है, यही सच्चा धर्म है। ईमानदारी से अपने कर्त्तव्य का निर्वाह व्यक्ति को ऊँचाई दे सकता है। वाराह पुराण में गीता का माहात्म्य बताया गया है। भगवान से प्रश्न है। भगवान ने कहा है कि गीता का आधा श्लोक भी यदि कोई पढ़ेगा तो उसका चन्द्रलोक में वास होगा और मनुष्य योनि में जन्म होगा।

जिस अभिलाशा से गीता का पाठ किया जाता है। वह पूरी होती है और आनन्द की उपलब्धि होती है।

एक कथा मिलती है- एक राजा ने युद्ध किया और जिज्ञासा की कि उसके जय-पराजय का भागी कौन है? अधिकार का अर्थ पूछा कि फल प्राप्ति का मालिक कौन होगा? मेरी विजय होगी या पराजय होगी ? उन्होंने फल की कामना की तो वणिक हो गये, क्योंकि वह कर्मयोग से अलग हो गये।

राजा जनक ने कहा था- मैं कर्म करता हूँ पर सुख-दु:ख का अनुभव मुझे नहीं होता, यही कर्मयोग है।

लोग स्वतंत्रता की आकांक्षा करते हैं किन्तु स्वतंत्रता का अर्थ है अपने 'स्व' के अधीन रहना। उस 'स्व' के विवेक को विकसित करने की विधि गीता बताती है। इसीलिये गुरु के अधीन रहकर स्वतंत्र होने की दीक्षा ली जाती है। मनुष्य को अपनी इन्द्रियों के अधीन रहकर नहीं, श्रीकृष्ण के अधीन रहकर आनन्द प्राप्त करना चाहिए। स्व का विस्तार ही मुक्ति है।

वैसे हर मनुष्य के हृदय में देवासुर संग्राम छिड़ा रहता है। कोइे भी अनुचित कार्य करने चलो तो हृदय से आवाज आती है वर्जना की, कि ऐसा न करो। पर हम अपनी उस आवाज को दबा देते हैं और आसुरी शक्ति मन पर हावी हो जाती है।

आज की परिस्थितियों में अक्रोध की सबसे अधिक आवश्यकता है क्योंकि क्रोध; विवेक नष्ट करता है। क्रोध आदमी को राक्षसत्व की ओर ले जाता है।

गीता कर्म की प्रधानता का उद्घोष है। वहाँ मुक्ति का अर्थ कर्महीनता नहीं मनुष्य को मुक्त मन से कर्म में निरंतर संलग्न रहना चाहिए। श्रीगीता निष्क्रियता को जड़ता मानती है। मानव फल के मोह से मुक्त होकर, कर्ता होने के अहं भाव से मुक्त होकर जो कर्म करता है, उसका फल बड़ा होता है, उदात्त की ओर ले जाने वाला होता है।

यह आसुरी और दैवी प्रवृत्तियाँ क्या हैं ? इनका क्या स्वभाव होता है ? इसके सम्बन्ध में गीता के सोहलवें अध्याय में चर्चा की गयी है।

इस प्रकार गीता के सोलहवें अध्याय में कर्त्तव्य अकर्त्तव्य के विवेक पर विशेष बल दिया गया है। गीता के संदेश का मुख्य कारण या महाभारत युद्ध का कारण, सत्ता से अधिक धर्म-अधर्म का द्वन्द्व है, यह स्पष्ट होता है।

स्वजनों को देखकर अर्जुन को मोह होता है और अपनों के संहार की कल्पना से भय होता है तथा उनका सारा युद्ध का उत्साह विचलित हो जाता है। यहाँ प्रभु श्रीकृष्ण उन्हें ज्ञान देते हैं, अपनों के मोह से मुक्त होने का, क्योंकि स्वजन-परजन का भेद ही मोह का कारण है। जब एक ही आत्मा सब में हैं तो फिर भेद कैसा ? हिंसा और अहिंसा को भी समझाते हैं कि क्या है ? शरीर की क्षणभंगुरता और आत्मा की अनश्वरता का बोध कराते हैं। मोह के कारण युद्ध से वैराग्य का जो भाव आता है, इस प्रसंग में वैराग्य और संन्यास की व्याख्या करते हैं।

जनहित में किये गये युद्ध को धर्मसंगत बताते हैं। जब अर्जुन परिवार की चिंता करते हैं तब उनको कर्म का संदेश और फल के प्रति आसक्ति न रखने का उपदेश करते हैं। यहाँ आत्मा की स्थिति को भी स्पष्ट करते हैं।

हृदय की शुद्धता को ही धर्म कहते हैं। शुद्ध हृदय से की गयी हिंसा भी अहिंसा के समान पुण्य करती है। कर्त्तव्य पालन के लिये बोला गया असत्य भी पुण्य है। कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का भेद भी समझाते हैं। क्योंकि धार्मिक आस्था की समझ होते हुए भी कर्त्तव्य की समझ न हो तो वह व्यर्थ हो जाता है।

ज्ञानी कौन है ? इस पर भी गीता में चर्चा है। ज्ञान सम्पन्न होने पर भी कर्त्तव्य-अकर्तव्य का बोध न हो तो वह ज्ञान व्यर्थ है। ज्ञानी होने का अहंकार भी पाप का मूल है। ज्ञानी कौन है ? इस सम्बन्ध में भी भगवान कहते है। जो ब्रह्मज्ञानी है वही पंडित है, वही पंडा है। धर्म-अधर्म का विवेक ही पांडित्य है। ब्रह्मज्ञानी का एक मत होता है, बहुमत नहीं होता किन्तु उसका एकमत भी श्रेष्ठ और वरेण्य होता है। श्रीकृष्ण कहते हैं मैं ब्रह्मज्ञानी हूँ। अतः असोच्य को लेकर सोच न करो। शरीर का अन्त निश्चित है, आत्मा और मन अदृश्य रूप से मुझसे जुड़ा है, तभी तक अमर है। सम्पूर्ण जगत दुख के जाल में फँसा है। उससे उद्धार पाने के लिये जब विकलता होती है तभी ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने की विकलता होती है। इस विकलता से ही ब्रह्मज्ञान मिलता हैं, मैं मिलता हूँ। यह ब्रह्मज्ञान स्वयं को जानना है, अपने शरीर, आत्मा की स्थिति को जानना है।

इसी प्रकार हे अर्जुन ! क्षत्रिय का कर्त्तव्य युद्ध है, उस कर्त्तव्य से विमुख होकर जो लोकापमान होता है वह मृत्यु से भी बढ़कर हैं। किन्तु युद्ध का कारण यदि धर्म की स्थापना और अधर्म का पतन हो, तब युद्ध पुण्य बन जाता है।

दैवी गुण यह भी है कि आदमी जल की तरह सबकी प्यास बुझाये तथा मैल धोये। व्यक्ति इतना सहज हो जाये जैसे कि जल। जल को जहाँ रख दिया जाता है उसका आकार वैसा ही ढल जाता है। जिस रंग के पात्र में डालिये उसी रंग का दिखने लगता है। जल बनकर ही दूसरों की क्रोधाग्नि शांत की जा सकती है।

सोलहवें अध्याय में शास्त्रोक्ति विधि के अनुसार कर्म करने का संदेश दिया गया है। शास्त्रों ने देशकाल और समय के अनुसार नियम बनाये है। इन्हें ज्ञानी ऋषियों ने लोक कल्याण की भावना से बनाया है। ये नियम

स्मृति ग्रंथों में सुरक्षित हैं। ये "स्मृतियाँ" आज की भाषा में न्याय कही जाती हैं। लेकिन आज के "ला" अर्थात कानून और "स्मृति" में यह मूलभूत अन्तर है कि आज न्याय का पालन ऊपर से, वाह्य दृष्टि से होता है। शास्त्रों के नियम और स्मृति आभ्यंतर और वाह्य दोनों के पालन की प्रेरणा देते हैं। इस नियमों में युगानुरूप परिवर्तन करने का भी शास्त्रों में स्पष्ट उल्लेख है। जैसे ठहरा हुआ जल सड़ाँध पैदा करता है। उसी तरह धर्म भी गतिशील है तभी श्रेयस्कर है। इसीलिये धर्म को बोझ न बनाकर सहज गतिशील रखने के उदाहरण भी शास्त्रों में मिलते हैं।

महात्मा गौतम बुद्ध,के सम्बन्ध में एक कथा मिलती है- एक व्यक्ति ने नदी पार करने के लिये बेड़ा बनाया। उस पर बैठकर नदी पार कर गया। उसने सोचा कि आगे फिर नदी पड़ेगी तो उसे पार करने के लिये इस बेड़े या नाव की फिर जरूरत पड़ेगी। उसने उसे सिर पर रख लिया। और ढोकर ले चला। थकान से चूर था। उधर से तथागत आ रहे थे। उन्होंने उसकी हालत देखकर नाव ढोने का कारण पूछा। वह बोला आगे फिर आवश्यकता पड़ेगी तो काम आयेगी। फिर कौन परिश्रम करेगा। लकड़ी काटना, बेड़ा बाँधना, बहुत परिश्रम का कार्य है। तथागत ने कहा यह विचार ठीक नहीं है। इससे तुम कष्ट पाओगे। फिर जरूरत पड़े तो बना लेना। यह तो तुम्हारे हाथ का काम है।

धर्म भी इसी प्रकार है। वह संसार या उसकी समस्याओं से पार लगाने के लिये आवश्यक है। पर जब वह भार बन जाये, गति अवरुद्ध करने लगे तो उसे छोड़कर आवश्यकतानुसार फिर से बनाने की आवश्यकता हैं। किन्तु धर्म के जो शाश्वत मूल्य हैं वह तो हर युग, देशकाल में अपनी सार्थकता रखते हैं।

जैसे अन्त:करण की शुद्धता, स्थितिप्रज्ञता (स्थिरता) अहिंसा, प्राणि मात्र में एक ही आत्मा के विस्तार की प्रतीति अर्थात समभाव, हर युग में कल्याणकारी है। इसी प्रकार त्याग, दया, उदारता, दानशीलता, इन्द्रिय निग्रह, स्वाध्याय द्वारा ज्ञान की उत्सुकता, कर्त्ता का दम्भ छोड़कर यज्ञादि करने का संकल्प आदि व्यक्ति को चरम लक्ष्य की ओर प्रेरित करते हैं। हर परिस्थिति में सहनशीलता, तप, सत्य के प्रति निष्ठा, अक्रोध, किसी की निन्दा न करना, मनुष्य की गति के उत्कर्ष में सहायक बनते हैं। अन्य दैवी गुण जैसे संतोष, स्वभाव की कोमलता, अलोलुपता, लोक और शास्त्र की मर्यादा के विरुद्ध काम करने में लज्जा या संकोच भाव का होना, आदि गुण व्यक्ति को लोकप्रिय बनाते हैं। सत्कार्य करने वाला या साधना करने वाला व्यक्ति तेज, क्षमा, धीरज जैसे गुणों से युक्त होता है। निरभिमान, शुद्धता, अद्रोह आदि ऐसे गुण हैं, जिनके कारण मनुष्य सब की श्रद्धा और आदर का पात्र बनता है। ये सभी दैवी सम्पदा के दैवी गुण मानव के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इनमें परिवर्तन की आवश्यकता कभी नहीं पड़ सकती है। किन्तु इनकी व्याख्या देश और काल के अनुसार बदल सकती है।

इन दैवी गुणों से सम्पन्न व्यक्ति में सत्-असत् का विवेक होता है। अत: बुरे कार्यों की ओर उसकी प्रवृत्ति नहीं जाती, वह तप और, साधना की ओर प्रेरित होती है। इसलिये वे परम तत्त्व को प्राप्त कर लेते हैं। वही सिद्ध पुरुष बनते हैं। ऐसे लोग काम, क्रोध, लोभ से मुक्त होकर कार्य करते हैं और सिद्धि प्राप्त करते हैं।

वे अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिये अभिमान पूर्वक यज्ञादि कर्म नहीं करते, वरन श्रद्धा समर्पण भाव से करते हैं और उन्हें मोक्ष मिलता है। इनकी शास्त्रों में श्रद्धा होती है, धर्म और ईश्वर के प्रति अनन्य विश्वास होता है, इसलिये शास्त्र विधि के नियमानुसार आचरण और कार्य करते हैं।

वही ईश्वर भक्त कहलाने योग्य हैं जो गीता में वर्णित दैवी सम्पदा के गुणों से युक्त हैं। आसुरी सम्पदा के बारे में भगवान इसलिये बताते हैं क्योंकि उसके बारे में ज्ञान होने पर ही उनसे स्वयं को बचाया जा सकता है या अपने भीतर आसुरी गुण हों तो उनसे मुक्त होने का प्रयास किया जा सकता है।

आसुरी सम्पदा, दैवी सम्पदा के विपरीत है। वह सांसारिक मायाजाल की ओर प्रेरित करती है। सत् , असत का विवेक नहीं रहने देती। ईश्वर की सत्ता में विश्वास न रखने के कारण धर्म या ईश्वर का भय नहीं रहता और धर्म विरुद्ध कार्य होता रहता है। जिसके कारण मोक्ष से दूर बंधनों में लिप्त रहता है प्राणी। काम, क्रोध, लोभ और मोह उसकी ओर स्वयं बढ़ते जाते हैं। अपने अहंकार अभिमान, अन्याय और लोलुपता के कारण वह सभी को दुख पहुँचाता है और स्वयं भी अशान्त रहता है।

गीता संन्यास और उदासीन निरपेक्ष भाव का संदेश देती है पर कर्म से सन्यास या उदासीनता का नहीं। इच्छाओं के प्रति उदासीनता और त्याग की बात करती है। कर्म भी आसक्ति और इच्छा का त्याग करके करना चाहिए। कर्त्ता का अहंकार भी छोड़ना आवश्यक होता है।

लोग कहते हैं कि गीता वृद्धों के लिए है। किन्तु गीता बच्चों के लिये भी है। बचपन से ही यदि उनमें सत्-असत्, कर्त्तव्य और त्याग का बोध होगा तभी वह अच्छे मानव बन सकेगे। युवकों को भी गीता का पारायण करना चाहिए, इसलिये कि विषय भोग ही चरम सुख नहीं है उन्हें यह ज्ञान हो। प्रौढ़ों, वृद्धों को इसलिये पढ़ना, मनन करना चाहिए कि वृद्धावस्था में लोगों के, परिवार की उपेक्षा के दंश उन्हें पीड़ा न दें।

गीता मोह से मुक्त करती है। स्थितिप्रज्ञ बनाती है। जो इसका श्रवण-मनन करता है, वह ईश्वर का प्रिय होता है। भगवान कृष्ण कहते हैं-

अध्येश्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्वामिति मे मतिः।

जो व्यक्ति इस पवित्र संवाद का अध्ययन करेगा। वह ज्ञानयज्ञ द्वारा मेरी पूजा कर रहा होगा।

श्रद्धावाननसूयश्च श्रृणुयादपि यो नरः।
सोऽपि मुक्तः शुभांल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम्।

माँ गीता के श्रवण का अधिकारी वही व्यक्ति है जिसमें श्रद्धा हो। जो अपने सुधार के लिये उत्सुक हो, अहंकारी न हो। इसीलिये भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि ऐसे व्यक्ति को गीता का मर्म न बताना जिसने जीवन में तप न किया हो या जो निन्दा की प्रकृति रखता हो। क्योंकि उसकी यह जड़ता जब तक मिटेगी नहीं वह कुछ नहीं समझ पायेगा।

अठारहवें अध्याय में पूरी गीता का निष्कर्ष है। गीता के विधिवत पाठ का और संपुट का भी विधान है। गीता के पाठ से अलौकिक सुख ही नहीं, लौकिक सुख की भी प्राप्ति होती है। क्योंकि जब मन में शांति और संतोष तथा समरसता हो तभी लौकिक सुख मिलता है।

भगवान कहते हैं कि गीता के अनुसार जीवन यापन करने से सभी कामनाओं की सिद्धि होती है। हे अर्जुन! (युद्ध में जीतने पर तुम्हें सुख का भोग मिलेगा और मरने पर स्वर्ग का लाभ।)

शंकराचार्य जी ने कहा है कि समस्त शास्त्रों का सारभूत गीता है। जैसे शास्त्र अपौरुषेय है, वैसे ही गीता भी वेद के समान अपौरुषेय है। यह श्रुति परंपरा से प्राप्त है। गीता स्मृति है।

कहते हैं कि विज्ञान कर्म का विरोधी है। कर्मयोग होगा तो विज्ञान नहीं बनेगा पर गीता में दोनों का समन्वय है।

ब्रह्मज्ञान क्रिया नहीं है, केवल कर्मयोग है। संन्यास में कर्म की समाप्ति नहीं है। केवल कर्म के कर्त्ता का अहं नहीं रह जाता। अर्जुन ने कहा था अपने स्वजनों को मारने से अच्छा है, भिक्षा माँगकर खाना। श्रीकृष्ण ने उनको उत्तर दिया कि तुम कर्म करो, भिक्षा क्षत्रिय का धर्म नहीं है।

शास्त्र मात्र हित की बात करता है, उसके बताये मार्ग पर चलकर मनुष्य अपना कल्याण तो करता ही है, पूरे विश्व को मार्ग दिखा सकता है।

श्री गीता में दर्शन का गूढ़ ज्ञान है पर यह केवल ज्ञानियों के लिये ही नहीं है। जनसामान्य को भी यह दिशा देने के लिये है। मैं अपना अनुभव बताती हूँ –कुछ परिस्थितियों में मान व अपमान, स्वाभिमान को लेकर मैं हारने टूटने लगी थी। कई बार लगा कि मैं मोहग्रस्त हो गयी हूँ, उन परिजनों के लिये, उन अपनो के लिये जो मुझे सम्मान भी नहीं दे सकते। ऐसे अवसरों पर गीता के समभाव "सुखे-दुखें समें कृत्वा" ने मुझे सँभाला। सुख-दुख से उदासीन हो जाने का भाव हमें निराश नहीं होने देता। अपेक्षाएँ ही दुख का कारण है। अपेक्षाएँ, सपने पूरे नहीं होते तो दुख होता है। ये अपेक्षाएँ जब सांसारिक होती हैं तभी उनकी अप्राप्ति से कष्ट होता है। जब वही अपेक्षा ईश्वर की ओर उन्मुख होती है, तो वहाँ सब कुछ सुलभ हो जाता है। क्योंकि वह हृदय में ही वास करता है। उसकी कृपा होते ही संसार के सुख-दु:ख छोटे हो जाते हैं। मन उस श्रीकृष्ण के सौन्दर्य में, उनकी लीला में मगन हो जाता हैं। इस सांसारिक मोह का छूटना ही मोक्ष है, मुक्ति है।

अनश्वर ईश्वर ही सबकी आत्मा में है, वह कभी नहीं मरता। अत: आत्मा की अजरता-अमरता का विश्वास होने पर मनुष्य अभय को प्राप्त करता है। अत: आत्मा का परमात्मा की ओर अभिमुख हो जाना ही अमरत्व है। यही संदेश अनेक प्रकार के दृष्टांतों के द्वारा समझाया गया है।

गीता में भगवान ने कहा है- राक्षसी मनुष्य मेरे स्वरूप को नहीं पहचानता। अर्जुन! तुम दैवी शाक्ति सम्पन्न हो, अत: कर्तव्य का निर्णय करने के लिए तुम्हें शास्त्रों को प्रमाण मानना चाहिए और शास्त्रों के अनुसार लोक में कर्म करना चाहिए। यही कर्मयोग है।

सभी धर्म ग्रंथों में देवों और असुरों के स्वरूप के बारे में प्रतीकों के माध्यम से समझाया गया है। दैवी शक्ति और आसुरी शक्ति दोनों में सदैव संघर्ष भी दिखाया गया है। महाभारत, रामायण से लेकर वाचिक परम्परा के साहित्य में भी इस संघर्ष की बात है पर विजय दैवी शक्ति की ही होती रही है। आज भी अन्धकार हावी है, प्रकाश संघर्षरत है। हमारा प्रयास होना चाहिए कि विजय प्रकाश अर्थात् दैवी शक्ति की हो। अंधेरे अर्थात आसुरी शक्तियाँ नष्ट हों। क्योंकि इसी में विश्व का मंगल है।

मनुष्य में दोनों शक्तियाँ होती हैं। बाहुल्य जिसका होता है, वही स्वभाव का निर्धारण करता है। दोनों का अंश मिला होता है। महाभारत में कहा गया है कि "नात्यन्त गुणवत् किंत्रियन्नातयितं दोष बताया।"

कुछ भी सम्पूर्णतया अच्छा या सम्पूर्णतया बुरा नहीं है। गीता के सोलहवे अध्याय का मर्म यहीं है कि सत् असत् के विवेक का प्रयास करना चाहिए। जीवन का चरम लक्ष्य परमार्थ है। अपने अहंकार का त्यागकर काम क्रोध मद लोभ से स्वयं को बचाकर कार्य करें। भक्ति और ज्ञान दोनों का विवेचन गीता करती है। भक्ति सबके लिए सुलभ है जो कि ईश्वर के चरणों में अपने आप को अर्पित कर देने से प्राप्त हो जाती है। किन्तु यह अर्पण भी तभी हो पाता है जब प्रभु की कृपा होती है। भक्त को ईश्वर का दर्शन सर्वत्र होने लगता है। उसे तर्क के भवजाल में फँसने की जरूरत नहीं है। भक्ति तर्कातीत है। वह गूँगे का गुड़ भी होती है और सब कुछ सहज कह देने की भी क्षमता रखती है।

गीता में सत्य की प्रतिष्ठा है। यह सत्य सभी धर्मों में समान रूप से प्रतिष्ठित है। सत्य से परे कोई धर्म है ही नहीं। महाभारत में कहा गया है कि हजार अश्वमेध यज्ञ को एक पलड़े पर रखा जाय और दूसरे पर सत्य को तो सत्य ही श्रेष्ठ सिद्ध होगा। इसमें भी वही सत्य श्रेष्ठ माना गया है , जिससे प्राणियों का हित हो। कहीं कहीं असत्य भी यदि कल्याणकारी होता है तो उसे सत्य से अधिक प्रतिष्ठा दी गयी है क्योंकि वहाँ सत्य का प्रयोग करने से किसी का अहित हो सकता है। इस सम्बन्ध में राजा शिवि द्वारा श्वेन पक्षी का रूप धारण किये हुए यमराज से कपोत की प्राण रक्षा के लिए किया गया असत्य भाषण धर्म संगत होने का दृष्टांत सर्वविदित है।

गीता के सोलहवें अध्याय में जिस अक्रोध की बात की गयी है, उसका यह अर्थ नहीं है कि अन्याय को देखने पर भी क्रोध न आये क्योंकि महाभारत में एक स्थान पर कहा गया है कि जिस मनुष्य को अन्याय होते देखकर क्रोध आता है और जो अपमान को सह नहीं सकता वही पुरुष कहलाने योग्य हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि गीता में जिस अक्रोध की बात की गयी है वह इस तरह के सात्विक क्रोध के बारे में नहीं है। क्योंकि स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अन्याय के विरुद्ध खड़े होने का उपदेश देने के लिए ही गीता का उपदेश दिया।

आज की परिस्थितियों में जहाँ अन्याय होते देखकर हम भयवश निरपेक्ष हो जाते है और अपने क्रोध को जनहित में नहीं लगा पाते, वहाँ गीता का उपदेश उस सात्विक क्रोध को जगाने के लिए अनिवार्य हो उठा है।

आज हम कायरों की भांति जीवन जी रहे हैं। अन्याय को समझते हुए भी उसका प्रतिकार नहीं कर रहे हैं क्योंकि कि हम भय से ग्रस्त हैं। यह भाव तभी दूर होगा जब गीता के अभय का अर्थ हम अपने जीवन में उतार सकेंगे।

श्रीमद्भगवत्गीता हमें कर्म का कौशल सिखाती है, जिसे भगवान ने गीता में कर्मयोग कहा है। और यह कर्मयोग की साधना योगेश्वर कृष्ण की कृपा से की जा सकती है। यह कर्मयोग तभी सधता है जब हम अपने 'मैं' का विलय करके प्रभु के श्री चरणों में अपने को अर्पित कर देते हैं।

गीता के सोलहवें अध्याय में भिन्न स्वभाव और प्रकृति के सांसारिक प्राणियों के सम्बन्ध में विवेचन हुआ है, जिसके अनुसार संसार में कई तरह के व्यक्ति होते हैं। कुछ में दैवी सम्पदा के गुण अधिक होते हैं , कुछ में आसुरी सम्पदा के। उनके गुणों के अनुसार उनके कर्म का भी वर्णन किया गया है। तथा यह भी स्पष्ट किया गया है कि किस स्वभाव और कर्म का फल क्या होता है और उसे कौन सी गति मिलती है। प्रत्येक मनुष्य को किस

तरह अपनी प्रवृत्ति सत्कर्म की ओर उन्मुख करके संसार में आचरण करना चाहिए, इसकी विवेचना भी की गयी है। मनुष्य का कर्म ऐसा होना चाहिए कि वह कर्म उसकी मोक्ष प्राप्ति में बाधक न बने।

श्रीमद्भगवत्गीता में ज्ञान और भक्ति के गूढ़ रहस्य छिपे हैं। पर यदि भगवत कृपा न हो तो ज्ञानियों के लिये भी यह अगम्य हो जाती है। किन्तु निश्छल, सहज भाव से प्रभु के चरणों में नत होकर सामान्य से सामान्य व्यक्ति भी गीता का ज्ञान और रहस्य अपने जीवन में उतार सकता है। आधि-व्याधियों से युक्त यह भौतिक संसार मनुष्य के जीने योग्य हो जाता है, यदि उस पर श्रीमद्भगवत्गीता की कृपा हो जाय।

गीता भागवत धर्म और नारायण धर्म के तत्व का विवेचन है। ईश्वर की एकान्त भाव से भक्ति और धर्म के अनुसार जगत में कर्म और व्यवहार करने से मोक्ष का पथ प्रशस्त करने का संकल्प "गीता" देती है।

जब हम सत्य की बात करते हैं तो वहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि सत्य तभी साध्य हो जाता है, तभी उसके दर्शन हो पाते है, जब अहंकार का पूरी तरह विलोप हो जाता है।

भिन्न-भिन्न उपनिषदों में ऋषियों ने अध्यात्म और दर्शन की अनेक प्रकार से व्याख्या की है, किन्तु श्रीमद्भगवतगीता की व्याख्या अपना विशिष्ट महत्व व प्रभाव रखती है, क्योंकि यह योगेश्वर श्रीकृष्ण के श्रीमुख से निकली है। इसका श्रोता भी कर्मयोगी वीर पुरुष अर्जुन हैं । इसलिए गीता हर देश काल, हर युग के लिए अपरिहार्य है।

★★★

ब्रज विरासत की झलक
उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद के नए भवन में

-चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

- मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी के हाथों से नये भवन का शुभारंभ
- मुख्यमंत्री जी पहली बार परिषद के नये भवन स्थित अपने कार्यालय में बैठे

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी के हाथों से 24 जून 2023 को शुभारंभ हो जाने के बाद अब उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद अपने नए भव्य भवन में ब्रज के विकास की रूपरेखा तैयार करने लगा है। वर्तमान में चल रहे विकास कार्यों का पर्यवेक्षण भी अब यहीं से हो रहा है। इस भवन का स्वरूप ब्रज की प्राचीन विरासत के अनुरूप है। भवन के शुभारंभ मौके पर परिषद की ब्रांड एंबेसडर व सांसद हेमा मालिनी जी और प्रदेश के पर्यटन व संस्कृति मंत्री उ.प्र. सरकार श्रीजयवीर सिंह, गन्ना मंत्री श्री लक्ष्मी नारायण चौधरी समेत कई विभागों के प्रमुख सचिव एवं जनप्रतिनिधि मौजूद रहे। भवन के शुभारंभ के उपरांत मुख्यमंत्री जी पहली बार अपने कार्यालय में बैठे।

उत्तर प्रदेश ब्रज तीर्थ विकास परिषद के पदेन अध्यक्ष मुख्यमंत्री जी हैं जबकि उपाध्यक्ष श्री शैलजाकांत मिश्र जी हैं जिन्हें मुख्य सचिव का दर्जा प्राप्त है। 18 से अधिक विभागों के प्रमुख सचिव, आयुक्त आगरा और मथुरा के जिलाधिकारी आदि परिषद के पदेन सदस्य हैं। वर्ष 2017 में योगी आदित्यनाथ जी ने मुख्यमंत्री पद की शपथ लेते ही उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद का गठन कर ब्रज के सर्वांगीण विकास की नींव रखी।

वर्ष 2022 में उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद के कार्यालय के लिए जमीन की तलाश पूरी हुई और कार्यालय बनना शुरू हुआ था। जवाहर बाग के सामने यह भवन जून 2023 में बनकर पूर्ण हुआ।

उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद के नये भवन में इस प्रकार की अनेक विविधताएं और विशेषतायें हैं जो ब्रज के प्राचीन मंदिर, स्मारकों में मिलती है। इस भवन का अंदर और बाहर का अलग ही मनभावन दृश्य है। परिषद भवन में भगवान श्रीकृष्ण की भव्य प्रतिमा है, जिस पर रोजाना दीप प्रज्वलन किया जाता है।

ये आकर्षक भवन 1500 वर्ग फीट क्षेत्र में तैयार किया गया है। तीन मंजिला इस भवन में बड़े मीटिंग हॉल के अलावा अंडर ग्राउंड पार्किंग भी बनाई गई है। भवन के निर्माण में 8.60 करोड़ की लागत आई है। इसे कार्यदायी संस्था मथुरा-वृंदावन विकास प्राधिकरण ने गाजियाबाद की कंस्ट्रक्शन कंपनी से बनवाया है। इस भव्य भवन के भूतल पर उप मुख्य कार्यपालक अधिकारी, जिला पर्यटन अधिकारी एवं वित्त अधिकारी आदि के कार्यालय हैं जबकि प्रथम तल पर मुख्य कार्यपालक अधिकारी श्री नगेंद्र प्रताप जी, पर्यावरण सलाहकार, तकनीकी सलाहकार आदि के ऑफिस हैं। भवन के सबसे ऊपर द्वितीय तल पर उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद के पदेन अध्यक्ष व मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी का शानदार कार्यालय है। इसी तल पर परिषद के उपाध्यक्ष श्री शैलजाकांत मिश्र जी बैठते हैं। बड़ा सभागार भी इस तल पर है। भवन के शुभारंभ मौके पर इस सभागार में पहली व परिषद की छठवीं बैठक हो चुकी है। भवन में दो अन्य लघु बैठक कक्ष भी हैं।

ब्रज के स्वरूप के अनुरूप भवन की डिजायन

उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद के नए भवन के बाहर के स्वरूप को ब्रज के धार्मिक स्वरूप के अनुरूप डिजायन किया गया है। लाल पत्थर से बनाए गए इस भवन के मुख्य गेट पर मंदिरों के खंभों की तरह ही खंभे लगाए गए हैं। मुख्य द्वार के ऊपर मंदिरों जैसा गुम्बद है। भूतल पर भगवान श्रीकृष्ण का लकड़ी का मंदिर बना है। बाहर दीवार पर ब्रज की सांझी कला के चित्र हैं।

मंदिर और महोत्सवों की पेंटिंग्स से सजा भवन

भगवान श्री कृष्ण ने समूचे ब्रज चौरासी कोस में अलग-अलग लीलाएं की हैं। वर्ष भर तीर्थयात्री मथुरा, वृंदावन, गोवर्धन आते हैं। परिषद का प्रयास है कि तीर्थयात्री समूचे ब्रज क्षेत्र में भ्रमण करें। इसी ध्येय से श्रीकृष्ण के सजे लीला स्थलों की पेटिंग लगायी गयी हैं।

रासलीला प्रशिक्षण कार्यशाला का सफल आयोजन

-चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

– गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी, वृन्दावन में अब एक साल का सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम

उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद ने ब्रज की प्राचीन नाट्य विधा और धरोहर 'रासलीला' के संरक्षण और संवर्द्धन की विधिवत शुरूआत की है। इसके अंतर्गत परिषद द्वारा वृंदावन में संचालित गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी में 15 जून से 14 जुलाई 2023 तक रासलीला प्रशिक्षण कार्यशाला आयोजित की गयी। इसमें लगभग 20 बालक-बालिकाओं ने रासलीला का मंचन सीखा। साथ ही कत्थक शैली में नृत्य का भी प्रशिक्षण प्राप्त किया। प्रशिक्षण का समापन 15 जुलाई 2023 को रमणरेती (महावन) के कार्ष्णि आश्रम में मंचन के साथ हुआ। मंचन देखने वालों में महामण्डलेश्वर गुरू शरणानंद जी महाराज, उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद के उपाध्यक्ष श्रीशैलजाकांत मिश्रजी, सीईओ श्रीनगेंद्र प्रताप जी आदि मौजूद रहे।

कार्यशाला का आयोजन गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी, वृंदावन और भातखंडे संस्कृति विश्वविद्यालय, लखनऊ (संस्कृति विभाग उ.प्र. सरकार) द्वारा संयुक्त रूप से किया गया। इसी क्रम में कार्यशाला के सफल आयोजन के बाद अब संस्थान भवन में अगस्त-2023 से रासलीला का एक साल का सर्टिफिकेट कोर्स भी प्रारंभ होगा।

रासलीला के एक माह के प्रशिक्षण से एक ओर ब्रज की इस विधा के संरक्षण की शुरुआत हुई है, वहीं कला व संस्कृति को रोजगार से जोड़ने की राज्य सरकार की नीति के अमल की भी यह एक शुरुआत भर है।

कार्यशाला में वृंदावन व आसपास के क्षेत्र के 10 से 18 वर्ष तक आयु वर्ग के 20 बालक व बालिकाओं ने कत्थक शैली में नृत्य और रास सीखा। नृत्य सिखाने के लिए भातखंडे संस्कृति विश्वविद्यालय, लखनऊ की कुलपति ने विश्वविद्यालय की कत्थक की प्रवक्ता डा. मीरा दीक्षित को वृंदावन भेजा।

कार्यशाला के प्रारंभिक दिनों में रास की परंपराओं, मंच पर रास की विधि व वाद्य यंत्रों का प्रारंभिक ज्ञान कराया गया। इसे बच्चों ने आत्मसात किया। इसके बाद मंचन का व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया गया।

कार्यशाला में दूसरे सप्ताह से बालक-बालिकाओं को 'बैरिन भई तू बंसुरी' नाट्यालेख (स्क्रिप्ट) दी गयी थी। स्क्रिप्ट का लेखन उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद के ब्रज संस्कृति विशेषज्ञ डा. उमेश चंद्र शर्मा ने किया था। डा. शर्मा जी के दिशा निर्देशन में ही कार्यशाला में बच्चों ने मंचन और उसका अभ्यास किया।

"बैरिन भई तू बंसुरी" रासलीला में राधा की अष्ट सखियों की उस पीड़ा का भावपूर्ण मंचन है जो उन्हें भगवान श्रीकृष्ण की बांसुरी से मिलती है। बांसुरी बजाने पर ज्यादा ध्यान देने के कारण सखियां श्रीकृष्ण से नाराज हो जाती हैं। बाद में उन्ही सखियों ने बांसुरी को छुपा दिया। ये सखी प्रधान रासलीला रही।

वृंदावन की ब्रज लोक लीला संस्थान के रासाचार्य स्वामी घनश्याम शर्मा ने हारमोनियम पर पद गाकर बच्चों को रास का अभ्यास कराया और रास की बारीकियां सिखाईं। उनके साथी कलाकार गोपाल बाबा ने पखावज, नारायण भारद्वाज ने तबला, हर्ष ठाकुर ने बांसुरी पर अभ्यास कराया। प्रकाश तिवारी कार्यशाला के विशेष सहयोगी रहे।

कार्यशाला में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले बालक-बालिकाओं में मोहित चौबे, मनीष भारद्वाज, मोहित, कृष्णकांत, प्रेम शर्मा, भावेश, आर्यन शर्मा, उपास्य पाल, मंथन, राज शर्मा, नैना, जहान्वी, अनुराधा चौधरी, प्रिंसी चौधरी, सृष्टि पाल, तमन्ना, कोमल, अंशिका मिश्रा व दिव्यांशी आदि सम्मिलित थे।

लखनऊ से पधारीं नृत्यांगना डा. मीरा दीक्षित ने बताया कि रासलीला में मंच पर जो नृत्य होता है, वह कत्थक शैली में ही होता है। रास की उत्पत्ति कत्थक नृत्य से पहले हुई थी। इसे ही ध्यान में रखकर कार्यशाला में बच्चों को कत्थक नृत्य सिखाया गया।

रासलीला प्रशिक्षण कार्यशाला के समापन पर 15 जुलाई 2023 शनिवार को "बैरन भई तू बंसुरी" रासलीला का भव्य मंचन श्री उदासीन कार्ष्णि आश्रम रमणरेती (महावन) मथुरा के विशाल पंडाल में हुआ। प्रशिक्षित बच्चों का मंचन देख आश्रम के तमाम संतजनों के साथ गुरू शरणाननंद जी महाराज ने उन्हें आशीर्वाद दिया। इस अवसर पर महाराज जी ने उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद मथुरा द्वारा रासलीला संरक्षण व संवर्द्धन के प्रयासों की सराहना की।

मंचन के दौरान उत्तर प्रदेश ब्रज तीर्थ विकास परिषद के उपाध्यक्ष श्री शैलजा कांत मिश्र जी, परिषद के सीईओ श्री नगेंद्र प्रताप जी, कार्ष्णि स्वरूपानंद, कार्ष्णि हरदेवानंद, कार्ष्णि दिव्यानंद, कार्ष्णि गोविंदानंद महाराज के अलावा तीर्थ विकास परिषद के अधिकारी इंजी. आर.के. जायसवाल, आरपी सिंह यादव व पूर्व प्राचार्य डॉ के.के. शर्मा आदि उपस्थित रहे। अंत में श्री शैलजाकांत जी एवं सीईओ श्री नगेंद्र प्रताप जी ने मंच पर ठाकुर जी की आरती उतारी व बच्चों व रासाचार्यों को प्रशस्ति पत्र प्रदान किए। ब्रज संस्कृति विशेषज्ञ डॉ उमेश चंद्र शर्मा ने "बैरन भई तू बंसुरी" रासलीला पर प्रकाश डाला। कार्यशाला और रमणरेती के मंचन की व्यवस्थाएं गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी, वृंदावन की शोध समन्वयक डॉ. रश्मि वर्मा, अकादमी के समन्वयक (प्रशिक्षण व सांस्कृतिक कार्यक्रम) चंद्र प्रताप सिंह सिकरवार एवं कम्प्यूटर ऑपरेटर दीपक शर्मा ने संभाली।

लघु पुस्तिका/बुकलेट प्रकाशित

कार्यशाला व मंचन की संक्षिप्त जानकारी के लिए लघु पुस्तिका/बुकलेट प्रकाशित करायी गयी है जिसमें गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी का परिचय, रासलीला के संरक्षण के संबंध में महानुभावों के विचार, भातखंडे संस्कृति वि.वि., लखनऊ का परिचय, कुलपति प्रो. मांडवी सिंह का शुभकामना संदेश, प्रवक्ता डॉ. मीरा दीक्षित का परिचय, "बैरिन भई तू बंसुरी" स्क्रिप्ट लेखन का भाव और प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले बच्चों व रास सिखाने वाली टीम के सदस्यों की सूची है।

श्रीकृष्ण का ब्रज में पुनः-पुनः आगमन

कपिल देव उपाध्याय

ऊधौ मोहि ब्रज बिसरत नाहिं।
वृन्दावन गोकुल तन आवत सघन तृनन की छाही।
प्रात समय माता जसुमति अरु-नन्द देखि सुख पावत।
माखन रोटी दह्यो सजायौ अति हित साथ खाववत॥
गोपी ग्वाल संग खेलत सब दिन हंसत सिरात।
सूरदास धनि धनि ब्रजवासी जिन सो हंसत ब्रजनाथ॥

महाकवि सूरदास जी ने उपरोक्त पद में श्रीकृष्ण को ब्रज की याद आने पर अपने परम मित्र ऊधौ से कहते हैं- हे उद्धव मुझे ब्रज विस्मरण नहीं होता, मुझे बार-बार अपने वृन्दावन, गोकुल एवं सघन लता-पताओं से निर्मित कुंजों की शीतल छाँह, सूर्योदय के समय प्रातःकाल माता जशोदा, बाबा नंद को देखकर सुख का प्राप्त होना व माँ यशोदा द्वारा स्वयं अपने हाथ से अत्यन्त प्रेम सहित दही, रोटी, माखन का खिलाना व गोपी-ग्वालों के संग संपूर्ण दिन हँसते खेलने में व्यतीत करना तथा वे व्रजवासी भी धन्य है, जिनके साथ ब्रज के प्राण श्रीकृष्ण मसखरी करते है। यह उपरोक्त दिनचर्या ऊधौ को विस्मरण नहीं होती।

यह सर्व स्वीकार जनश्रुति है कि कृष्ण ने 11 वर्ष कुछ दिन ब्रज में व्यतीत करने के बाद मथुरा, द्वारिका जाने के पश्चात् कभी ब्रज लौटकर नहीं आये। उपरोक्त पद के भावार्थ से ऐसा प्रतीत होता है कि श्रीकृष्ण ब्रजवासियों को कैसे भूल सकते थे। उनके ब्रज आगमन का विभिन्न शास्त्रों में अलग-अलग समय पर आगमन का संकेत प्राप्त होता है, जैसे गर्ग संहिता में जब श्रीकृष्ण ने उद्धव को ब्रज प्रेम की शिक्षा

लेने हेतु प्रेषित किया, उद्धव का ज्ञान अभिमान शून्य होने, ब्रजवासी, गोपियों, ग्वाल, पशु-पक्षियों व श्रीराधा को प्रेम विरह में व्यथित देखकर श्रीकृष्ण को ब्रज में पुनः वापस लाने की प्रतिज्ञा करते हैं।

परिपूर्णतमे कृष्णे वृषभानुवरात्मजे।
गन्तुमाज्ञां देहि मध्यं नमस्तुभ्यं व्रजेश्वरी॥17॥
प्रतिपत्रं देहि शुभे श्रीकृष्णाय महात्मने।
तेन तं च प्रणभ्याशु समानेष्ये तवान्ति कम्॥18॥

(गर्ग संहिता म. ख. 18 अध्याय)

उद्धवजी ने कहा- परिपूर्णतमे कृष्ण स्वरूपे, वृषभानु नन्दिनी, मुझे जाने की आज्ञा दीजिये। व्रजेश्वरी आपको नमस्कार है। शुभे! महात्मा-श्रीकृष्ण को उनके पत्र का उत्तर दीजिये। उसके द्वारा शीघ्र ही उनके चरणों में प्रणाम करके, मैं उन्हें वापस ले आऊँगा।

वैसे भाव जगत में यह प्रसिद्ध है कि भक्त के वचनों को श्रीकृष्ण मिथ्या नहीं होने देते, चाहे उनकी ही प्रतिज्ञा क्यों ना टूट जाये। उद्धवजी ने मथुरा लौटकर वट वृक्ष के नीचे बैठे हुए श्रीकृष्ण से अपनी प्रार्थना निवेदित की।

प्रह्लाद रुक्माङ्गदयोः प्रतिज्ञां, बलेश्च खट् वाङ्ग नृपस्य साक्षात्।
यथाम्बरीष ध्रुवयोस्तथा मे, कृताञ्च भक्तेश्वर रक्ष-रक्ष॥32॥

(गर्ग संहिता, म. ख.- 18 अध्याय)

भक्तों के परमेश्वर! जैसे आपने प्रहलाद, रुक्मांङ्गवद, बलि और खट्वाङ्ग की तथा अम्बरीष और ध्रुव की प्रतिज्ञा रखी है, उसी प्रकार मेरी की हुई प्रतिज्ञा की भी रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये।

इस प्रकार उद्धव के वचन सुनकर भक्त की प्रतिज्ञा का मान रखने के लिए श्रीकृष्ण ने ब्रज जाने का विचार किया। समस्त कार्यभारों पर दृष्टि रखने हेतु बल्देव जी को मथुरा में छोड़कर चंचल घोड़ो से जुते हुए किङ्किणी जाल मन्डित सुवर्ण जटित सूर्य तुल्य तेजस्वी रथ पर उद्धव के साथ आरूढ़ होकर भगवान् श्रीकृष्ण भक्तों को दर्शन देने के लिए नन्दगाँव गये।

इत्थं निशम्य भक्तस्य वचनं भक्त वत्सलः।
स्मृत्वा वाक्यं स्वकथितं गन्तु चक्रेऽच्युतोमतिम्॥1॥
बल्देवं स्थापयित्वा कार्य भारेषु सर्वतः।
हेमाढ़यं किङ्किणीजालं चञ्चलाश्वनियोजितम्॥2॥
रथ मारूह्य सूर्याभमुद्धवेन समान्वितः।
भक्तानां दर्शन दातुं प्रययौ नन्दगोकुलम्॥3॥

(गर्ग संहिता, म. ख.- 19 अध्याय)

इस प्रकार ग्वालों ने यशोदा, नन्द, उपनन्द ने श्रीकृष्ण के आगमन का समाचार सुनकर उल्लसित होकर श्रीकृष्ण के सत्कार के लिए नन्द के नगर की सीमा पर आकर, विभिन्न वाद्य यंत्रों को बजाकर, सजावट कर सत्कार किया, श्रीकृष्ण ने नन्दजी को हाथी पर सवार कर स्वयं उद्धवजी सहित रथ पर आरूढ़ होकर नन्द नगर में प्रवेश किया, ऊपर से फूलों की वर्षा की गयी। जय हो, जय हो का मांगलिक उच्चारण किया गया।

धन्यः सखा ते परमुद्धवोऽय मनेन साक्षात्किल दर्शितोऽत्त
त्वं जीवनं गोपजनस्य गोपा ऊचुर्गिरा गद्गदयेदमार्ताः ॥31॥

(गर्ग संहिता, म. ख.- 19 अध्याय)

नन्दजी ने कहा- श्रीकृष्ण तुम्हारा सखा- उद्धव धन्य है, क्योंकि इसने गोपीजनों के जीवन भूतं साक्षात् तुम्हारा दर्शन करा दिया।

गर्ग संहिता में श्रीकृष्ण के पुनः ब्रज आगमन के उपरान्त कदली वन में महारास लीला का भी वर्णन है।

एक बार द्वारिका में महाराज उग्रसेन जी को सभी यादव पराक्रमी वीरों ने सुधर्मा सभा में एक मत होकर अश्वमेघ यज्ञ के लिए प्रेरित किया। श्रीकृष्ण व बलराम जी ने भी अपनी सहमति प्रदान की, तदुपरान्त प्रद्युम्न के नेतृत्व में सभी यादव वीरों ने पृथ्वी लोक-आकाश कैलाश, देव, किन्नर, गन्धर्व, नामक आदि जाति के प्रदेश को विजयकर कैलाश से पृथ्वी पर आये जहाँ कुन्दल व बल्लभ शूरवीरों ने यादव सेना को चुनौती दी। वह दोनों वीर श्रीशिव भगवान् के परम भक्त थे। प्रद्युम्न के साथ युद्ध में कुन्दल मारा गया तथा बल्वल मूर्छित हो गया, नारद जी के प्रेरणा से शिव अत्यन्त कुपित हो

हुए, वह अपने गणों के साथ युद्ध में बल्वल के सर्मथन में न केवल कुपित हुए, अपितु वह अपने गणों के साथ युद्ध में बल्वल के सर्मथन में आ गये एवं युद्ध में भाग लिया, क्रोध में वृषभ को आज्ञा देने पर वृषभ ने सुनन्द को मार दिया व यादव सेना का संहार करने लगा। शिवजी ने प्रद्युम्न को मृत प्राय: कर दिया। अनिरूद्ध ने भैरव के साथ भीषण रण में मोहाच्छन्न कर दिया जिससे भैरव रज भूमि में गिर पड़े। भैरव को जमीन पर गिरते देख भगवान् शिव ने अनिरूद्ध पर त्रिशूल से प्रहार किया, त्रिशूल अनिरूद्ध के हृदय को विर्दीण करता हुआ निकल गया एवं पृथ्वी पर गिर पड़े, तदुपरान्त साम्ब ने शिव के समक्ष जाकर क्रोध पूर्वक अनुचित बातें कहीं, एवं नारद जी द्वारा युद्ध का समाचार द्वारिका में कृष्ण जी को देने पर स्वयं युद्ध क्षेत्र में पधारे, साम्ब प्रफुल्लित हो गये व शंकर जी ने श्रीकृष्ण को देखकर धनुष, त्रिशूल आदि अस्त्रों का परित्याग कर दिया। क्षमा प्रार्थी होकर श्रीकृष्ण की वन्दना की। जब शिव शंकर जी ने श्रीकृष्ण के पुत्र सुनन्द को जीवित, प्रद्युम्म, अनिरूद्ध व यादव सेना को स्वस्थ युद्ध पूर्व की तरह कर दिया। उसके उपरांत यादव सेना अश्व मेघ के अश्व को लेकर ब्रज में पधारी, जहां श्रीदामा ने अश्व को पकड़ कर नन्दबाबा के समक्ष ले गया, तब श्रीकृष्ण नन्द बाबा के समक्ष नन्द भवन में पधारें। बाबा नन्द ने श्रीकृष्ण को गले लगा लिया, यादव सेना के स्वागत सत्कार की व्यवस्था कर नन्द यशोदा अत्यन्त प्रसन्न हुई। (प्रद्युम्न ने सेना का पडाव यमुना के तट पर किया, श्रीकृष्ण कुछ समय नन्द भवन में ठहर कर आगामी गन्तव्य पर सेना सहित कूच कर गये)।

नन्द को देख–

ततो निरीक्ष्यं पितरं श्रीकृष्ण: पितृवत्सल:
अपप्लुत्य रथालूर्ण पपात चरणौ पितु: ॥25॥

पिता को देखकर पितृवत्सल श्रीकृष्ण रथ से कूदकर तत्काल उनके चरणों में गिर पड़े। श्रीनन्दराय जी सुदीर्घकाल के बाद आये हुए अपने पुत्र को उठाया और उन्हें छाती से लगाकर रोने लगे।

श्रीनन्दराजस्त नयं समुत्थाय चिरागतम्।
स्नापयामास सलिलै: कृत्वा वक्षसि नेत्रयो: ॥26॥
नन्दाद्या सरु दुर्गोपा: श्रीकृष्णाद्याश्च यादव:।
प्रवक्तुं न समर्थास्ते सर्वे विरहविक्लव: ॥29॥

एक ओर नन्द आदि गोप रो रहे थे और दूसरी ओर श्रीकृष्ण आदि यादव। सब लोग विरह से व्याकुल होने के कारण परस्पर बोल नहीं पाते थे।

यशोदा तस्य जननी स्व प्राणेभ्य: प्रियं सुतम्।
उप गूहय ददौ तस्मै गिरा गद्गदं याशिष: ॥42॥

श्रीकृष्ण की माता यशोदा ने अपने प्राणों से भी प्यारे पुत्र को छाती से लगाकर उन्हें गद्गद् कण्ठ से आशीर्वाद दिया।

(अश्वमेघ: खण्ड चालीसवाँ अध्याय)

आहूतो राधया कृष्णः सन्ध्यायां नन्दनन्दनः।
जमाम शश्वदे कान्ते शीतलं कदलीवनम्॥1॥

संध्या के समय श्रीराधा ने नन्द नन्दन श्रीकृष्ण को बुलवाया, उनका आमन्त्रण पाकर, नित्य एकान्त स्थल में, जहाँ शीतल कदलीवन था, श्रीकृष्ण वहाँ गये।

(अश्वमेघः इकतालीसवां अध्याय)

तृतीय प्रसंग-

शाल्व देव के ब्रह्मदत्त नामक राजा थे, उनका ब्राह्मण मित्र व मंत्री मित्र सह था। ब्रह्मदत्त, प्रजापालक, न्यायप्रिय, सुशासन प्रिय राजा था। राज्य व प्रजा धन सम्पन्न सुखी थी। राजा ब्रह्मदत्त इन्द्र के समान राज्य पर शासन करता वैभव पूर्ण राजधानी इन्द्र की राजधानी तुल्य थी। परन्तु राजा, मंत्री पुत्रहीन थे।

अतः राजा ने प्रजा की सलाह पर भगवान शंकर की कठिन आराधना करते से स्वप्न में भगवान शंकर ने दर्शन दिये। वरदान मांगने की आज्ञा पर पुत्रवान होने का वरदान प्राप्त करने से उनके दो पुत्र हंस व डिम्भ हुए। मित्र सह मंत्री ने भी दैव आराधना कर पुत्र जनार्दन प्राप्त किया, राजा पुत्र व मंत्री पुत्र समवयस्क मित्र थे। सम वयस्क होने से तीनों ने भगवान शंकर की कठोर तपस्या करके राज पुत्रों ने नाग, गन्धर्व, किन्नर, असुर सेनापति आदि को पराजित करने का वरदान प्राप्त करके दोनों भाई हंस, डिम्भक अजेय हो गये। भगवान् शंकर से यह वरदान भी प्राप्त किया, युद्ध के समय भगवान शंकर के दो गण युद्ध में साथ रहेंगे। जर्नादन ने विद्वान, धर्माम्वलम्बी होने का वरदान प्राप्त किया। तीनों मित्र एक साथ ही रहते व एक साथ सभी गतिविधियों में भाग लेते एवं एक साथ तीनों मित्रों का विवाह सम्पन्न हुआ।

एक दिन तीनों हंस, डिम्भक, जनार्दन शिकार खेलकर लौट रहे थे। रास्ते में पुष्कर तीर्थ में महर्षि कश्यप के यज्ञ में ऋषियों का दर्शन किया। सभी ऋषियों ने राजपुत्र व मित्र सह पुत्र जर्नादन का सत्कार किया, परन्तु दुर्वासा ऋषि अपने स्थान पर निश्चल बैठे रहे। इससे हंस व डिम्भक क्रोधित हो गये। उन्हें बुरा भला कहने लगे। इतने से भी क्रोध शान्त नहीं हुआ, तो उनकी कोपीन भी उतरवा ली। इस पर दुर्वासा क्रोधित हुए और वह न्याय की गुहार लगाने स्वयं सुधर्मा सभा द्वारिका में उपस्थित हुए। श्रीकृष्ण ने आदर सत्कार कर उनकी दुर्दशा का कारण पूछा, तब महर्षि ने सारा वृतान्त कह सुनाया, श्रीकृष्ण ने मखमल की कोपीन देकर अत्यन्त सत्कार कर महर्षि को संतुष्ट किया। तदुपरान्त श्रीकृष्ण ने समय पर दण्डित करने का आश्वासन दिया।

हंस व डिम्भक अपने पिता के पास पहुँचे, अपने शूरवीरता व अजेयता के मद में अपने पिता ब्रह्मदत्त से निवेदन किया कि आप राजसूय यज्ञ का आयोजन करें। पिता ब्रह्मदत्त ने सबसे बड़ी बाधा, भीष्म पितामह व श्रीकृष्ण अन्य यदुवंशी बतलाये। हंस, डिम्भक ने कहा, पिताजी पितामह भीष्म की चिन्ता न करें। श्रीकृष्ण को हम अपने अधिकार में ले लेंगे, भीष्म पितामह वृद्ध हो चुके है।

श्रीकृष्ण को द्वारिका में जर्नादन द्वारा संदेश भिजवाया। यादव संघ द्वारिका हमें नमक का कर अदा करे। जबकि जनार्दन ने समझाया श्रीकृष्ण से विरोध न ले। जब दोनों भाई न माने तब जर्नादन संदेश लेकर द्वारिका

गया। द्वारिका की सभा में नमक के कर का प्रस्ताव रखा, सभी यादव वीरों ने हंस-डिम्भक की अवहेलना कर मजाक बनाया। श्रीकृष्ण ने गंभीरता से जनार्दन को प्रत्युत्तर दिया, हम निर्णय बाद में प्रेषित करेंगे। कुछ समय बाद यादव वीर सात्यकि श्रीकृष्ण का संदेश लेकर ब्रह्मदत्त की सभा में गये, सात्यकि से हंस डिम्भक ने कुशल क्षेम पूछने के बाद नमक के कर की चर्चा पर सत्याकि ने नकारात्मक उत्तर दिया। जिससे हंस डिम्भक भड़क गये। सत्याकि ने द्वारिका जाकर सब वृतान्त सुनाया। यादव वीरों ने युद्ध की तैयारी प्रारंभ कर दी। श्रीकृष्ण ने युद्ध के लिए संदेश में स्थान नियत करने का आग्रह किया तय हुआ, युद्ध पुष्कर में होगा।

सभी यादव संघ के प्रमुख उग्रसेन, वसुदेव, सत्याकि, श्रीकृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न, साम्ब, अनिरूद्ध आदि युद्ध के लिए पुष्कर आगमन किया। जहाँ हंस, डिम्भक के साथ भयंकर युद्ध हुआ, विचक्र ने भी यादव वीरों के विरूद्ध हंस डिम्भक का साथ दिया। यह युद्ध पुष्कर क्षेत्र में हंस-डिम्भक की सेना व विचक्र का यादव सेना व यादव वीरों के साथ प्रारंभ हुआ, जहाँ कृष्ण ने हंस व डिम्भक पर आग्नेयस्त्र, वायव्स्त्र, महेश्वरास्त्र, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच अस्त्र छोड़े, हंस ने वरूणास्त्र, महेन्द्रास्त्र, रौद्रस्त्र द्वारा सभी गोविन्द के अस्त्र निष्फल कर दिये, इसके तुरन्त बाद हंस ने ब्रह्मास्त्र, कौबेरास्त्रा, असुरास्त्र, यामास्त्र ये चार अस्त्रा का संधान गोविन्द पर किया, इस पर गोविन्द ने ब्रह्मशिर नामक महान विनाशकारी अस्त्र हंस पर प्रहार किया, इस अस्त्र से हंस भयभीत हो गया एवं हंस ने भी ब्रह्मशिर अस्त्र का प्रयोग कर इसे निष्फल कर दिया, अब यादवों की सेना ने हंस डिम्भक के सेना को खदेड़ते हुए ब्रज प्रदेश - शूरसेन प्रदेश में पहुंचा दिया। यहाँ यमुना किनारे गोविन्द ने यमुना जी का आचमन कर वैष्णावस्त्र का प्रयोग हंस पर वध करने हेतु किया।

दूसरी तरफ विचक्र महाराज उग्रसेन, वसुदेवजी से युद्ध कर रहा था। डिम्मक का वलभद्र, सात्यकि के साथ युद्ध हुआ। बलभद्र जी द्वारा हिडिम्ब का वध हुआ, जब विचक्र का घोर युद्ध श्रीकृष्ण के साथ हुआ व विचक्र मारा गया। वैष्णवास्त्र के प्रहार से हंस निश्चेष्ट सा होने लगा, वह डर के मारे रथ से उछलकर यमुना जी की ओर भागा, जहाँ पूर्व काल में हृषीकेश भगवान् ने कालियनाग का मर्दन किया।

अथ भीतो महारौद्रमस्त्रं दृष्ट्वा नृपोत्तम।
हंसो राजा महाराज निश्चेष्ट इव सम्बभौ॥1॥
उत्पलुत्य सरथात् तस्माद् यमुनामभ्य धावत।
यत्र कृष्णो हृषिकेशः कालियाहिं ममर्दह॥2॥

(खिलभाग हरिवंशपुराण एक सौ अट्ठाइसवां अध्याय)

उसी महाघोर कालियहद में हंस कूद पड़ा, उसके कूदने पर वहाँ बड़ा भारी धमाके का शब्द हुआ। मानों इन्द्र द्वारा समुद्र में पर्वतों को गिराये जाने का कोलाहल हुआ हो।

तस्मिन् हृदे महाघोरे पपाता थ स हंसकः।
हंसे पतितं तस्मिंस्तु महान् रावो बभूवह॥4॥

गिरीणां पात्यमनानां समुद्र इवं वज्रिणा।

रथा दुत्प्लुत्य कृष्णोऽपि तस्यो परि पपातह॥5॥

तब जगदीश्वरं देवाधि देव श्रीकृष्ण भी संपूर्ण जगत् को विस्मय में डालते हुए से रथ से उछल कर उस कुण्ड में हंस के ऊपर कूद पड़े, उस समय केशव ने उस पर दोनों पैरों से प्रहार किया।

देव देवो जगन्नाथो जगद् विस्मापयन्निव।

प्रहारत् तं महा बाहु पदाम्यामथ केशवः॥

श्रीकृष्ण के चरणों के प्रहार से हंस मर गया, ऐसा कुछ लोग कहते है, जबकि दूसरे लोग कहते है- चरणों के प्रहार से पाताल में धँस गया, जहाँ सर्प उसे खा गये, पुनः जीवित नहीं लौटा। जब डिम्भक ने देखा हंस यमुना में कूद गया, वह नहीं लौटा तो डिम्भक भी कालीदह में भ्रात प्रेम में कूद गया, वह विरह सहन न कर सका उसे भी किसी ने लौटकर आते नहीं देखा। कुछ दिन प्रतिक्षा के बाद में श्रीकृष्ण ने यादव वीरों के साथ कुछ महीने गोवर्धन पर्वत की तलहटी में आराम किया।

गोप-गोपियों को यह ज्ञात हुआ, श्रीकृष्ण गोवर्धन पर्वत की तलहटी में पधारे है, वह सब उत्साहपूर्वक श्रीकृष्ण बलरामजी से नन्द, यशोदा, ग्वाल-बालों के साथ उत्सुकता पूर्वक मिलने के लिए पधारें।

यशोदां नन्द गोपश्च कृष्ण दर्शन लाल सौ।

गोवर्धन गतं श्रुत्वा वासुदेवं सहाग्रजम्॥1॥

नवनीतं च दधि च पायसं कृसरं तथा।

वन्यं पुष्पं महाराज मयूराङ्गद मेव च॥2॥

नन्द-यशोदा गोवर्धन पर्वत पर कृष्ण दर्शन की उत्सुकता के साथ प्रसन्न होकर, मक्खन, दही, खीर, खिचड़ी, जंगली फूल, मोर पंख के बाजूबन्द लेकर गोप-गोपियों के साथ श्रीकृष्ण ने भेंट करने गोवर्धन पर्वत पर गये।

वहाँ सभी ब्रजवासियों ने श्रीकृष्ण बलराम को पेड़ की छाँव में बैठा देखकर सभी अत्यन्त प्रसन्न हुए। नन्द यशोदा के स्नेह वात्सल्य उमड़ आया एवं महाबली कृष्ण ने नन्द यशोदा को प्रणाम किया एवं उस समय श्रीकृष्ण ने नन्द यशोदा जी से पूछा माँ, बाबा सभी गोप ग्वाल, गोपियाँ, गाय, बछड़े सकुशल तो है।

तात मात र्व्रजे गोष्ठे कुशलं व स्व गोधनम्।

अपि गावः क्षीरवत्यो वत्सा वत्सराः पितः॥6॥

कृष्ण ने पूछा : बाबा मैया ब्रज के गोष्ठ में अपने सभी गोधन सकुशल तो है न, बाबा गौए दूध देती है न, उनके छोटे-बड़े बछड़े सुखी है न।

शकट्टानि सुगन्धानि किवा सन्ती पितध्रुवम्।

अपि गोप्यः पुत्रवत्यो द्वारकान् किमणी नन्॥9॥

(खिलाभाग हरिवंश पुराण 130 अध्याय)

पिताजी। क्या छकड़े सदा गो रस से सुगन्धित रहते है? क्या गोपियाँ पुत्रवती हुई है? क्या उन्होंने बच्चों को जन्म दिया है।

यह समय ब्रज आगमन का पांडवों के राजसूय यज्ञ से पहले हुआ। क्योंकि यदि हंस-डिम्भक का वध नहीं हेाता तब राजसूय यज्ञ युधिष्ठर का सम्पन्न होने में कठिनाई होती।

पांडव वनवास में प्रथम काम्यक वन में ध्रुत क्रीड़ा में पराजित होने के उपरान्त आये। काम्यक वन ही कामवन है, जहाँ युधिष्ठर ने र्निवासित जीवन की प्रथम सभा में पंचाल नरेश द्रुपद, दुष्टद्युम्न, माद्र नरेश, आदि पांडवों के शुभ चिन्तकों ने सभा की। जिसमें सभी पांडव पक्षीय राजाओं ने श्रीकृष्ण को अग्र बनाकर पांडवों से संवाद कराया। कामवन ब्रज का ही एक भाग है, जो कि बारह वनों में प्रमुख है।

पंचम प्रसंग-

श्रीमद् भागवत पुराण प्रथम स्कन्द के दशमोध्याय के अनुसार महाभारत युद्ध समाप्ति के उपरांत श्रीकृष्ण पांडवों से विदा लेने के बाद जैसे ही प्रस्थान के लिए उद्यत हुए। बुआ, कुन्ती ने रोक लिया, श्रीकृष्ण से बोली- कृष्ण मेरे आग्रह से कुछ समय रूक जाओ। तदुपरान्त श्रीकृष्ण कुछ माह के उपरांत मित्र उद्धव, सत्याकि आदि मित्रों के साथ कुरु जंगल, पांचांल, शूरसेन, यमुना के तटवर्ती प्रदेश ब्रह्मावर्त, कुरूक्षेत्र, मत्स्य, सारस्वत और मरून्धव देश को पार कर सौवीर और आमीर देश के पश्चिम में आर्नत देश में आये, उस समय घोड़े अधिक चलने के कारण थक गये थे।

कुरुणाङ्गल पाञ्चान् शूरसेनान सयामुनान्।
बह्मावर्त कुरूक्षेत्रं मत्स्यान् सारस्वसानथ ॥34॥

ब्रज प्रदेश का ही नाम शूरसेन प्रदेश है, ऐसा अनुमान है कि नन्दबाबा समस्त परिकर सहित राया के पास कृष्ण से मिलने आये। यहाँ पर श्रीकृष्ण ने नन्दबाबा एवं समस्त परिकर के साथ कुछ समय व्यतीत किया।

★★★

मुड़िया पूर्णिमा

(गुरू पूजा का दिन)

सुनील शर्मा

मुड़िया पूर्णिमा पर चैतन्य महाप्रभु सम्प्रदाय के शिष्य सनातन गोस्वामी की स्मृति में सिर मुड़वा कर कीर्तन करते हुए मानसी गंगा की परिक्रमा करते हैं। ब्रज क्षेत्र के प्रत्येक मंदिर, आश्रम में भक्त अपने-अपने गुरू की पूजा अर्चना करते हैं।

पौराणिक मान्यताओं के अनुसार समूचे ब्रजक्षेत्र में दो ही वस्तुओं का आज भी अस्तित्व विद्यमान है, इनमें एक है यमुना नदी और दूसरा गोवर्धन स्थित गिरिराज पर्वत। भगवान श्रीकृष्ण ने कालिया नाग का वध करके यमुना को प्रदूषण से मुक्त कराया था और गिरिराज गोवर्धन पर्वत को अपनी छोटी अंगुली में छाता की तरह उठाकर इंद्रदेव की अतिवृष्टि से डूबते ब्रजवासियों को बचाया था। भगवान श्रीकृष्ण के समय से आज तक यमुना और गिरिराज पर्वत गोवर्धन करोड़ों-करोड़ों आस्थावान भारतीयों की श्रद्धा का केंद्र बना हुआ है। आज संपूर्ण विश्व में ब्रजभूमि को यमुना और गोवर्धन पर्वत के कारण ही जाना जाता है। इसीलिये पूरे विश्व से मथुरा, वृन्दावन, गोवर्धन, नन्दगांव, बरसाना, गोकुल, महावन बलदेव आदि धार्मिक स्थलों को देखने व भगवान श्रीकृष्ण की लीला भूमि का दर्शन करने प्रतिवर्ष लाखों करोड़ों तीर्थ यात्री यहां आते हैं। यमुना के जल को आचमन मात्र से मोक्ष की प्राप्ति का अटूट विश्वास लोक जन मानस में आज भी बना हुआ है और गिरिराज गोवर्धन को साक्षात कृष्ण का ही रूप मान कर लोग सप्तकोसीय परिक्रमा वर्ष भर करते ही रहते हैं।

मथुरा मुख्यालय से 22 कि.मी. की दूरी पर स्थित है प्राचीन तीर्थ स्थल गोवर्धन, गोवर्धन के चारों ओर लगभग 21 किलो मीटर क्षेत्र में गिरिराज गोवर्धन अराबली पर्वत श्रृंखला है। इस पर्वत श्रृखंला की तलहटी में बारहों महीने करोड़ों

लोगों को परिक्रमा कर गिरिराज गोवर्धन के प्रति अपनी आस्था और भक्ति की अभिव्यक्ति करते व अपने आपको इस ब्रज रज के साथ एकाकार करके पुण्य प्राप्त करते देखा जा सकता है। गुरू पूर्णिमा का लोक पर्व "मुड़िया पूनौ" के नाम से जाना जाता है, इस दिन बड़ी संख्या में भक्त देश के विभिन्न अंचलों से रेल मार्ग, सड़क मार्ग से या फिर अपने-अपने साधनों से यहां पहुंचते हैं। जिनके कारण मुड़िया पूनौ ब्रज का सबसे बड़ा राजकीय लक्खी मेला बन गया है।

गुरू पूर्णिमा के इस लोक पर्व के रूप में मनाये जाने के पीछे भगवान वेदव्यास का जन्म दिवस व चैतन्य महाप्रभु सम्प्रदाय के शिष्य आचार्य सनातन गोस्वामी का आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा को निर्वाण और गिरिराज गोवर्धन को साक्षात श्रीकृष्ण के रूप में मानने की अटूट आस्था है। इस आस्था का दर्शन भक्तों द्वारा गिरिराज गोवर्धन की परिक्रमा लगाते समय गाये जाने वाले लोक गीतों के माध्यम से होता है। एक लोकगीत में गोवर्धन परिक्रमा को जाने के लिए मन की व्याकुलता गिर्राज जी की परिक्रमा और मानसी गंगा में स्नान की आकांक्षा श्रद्धालु इस प्रकार व्यक्त करते हैं।

नांय माने मेरौं मनुआं मैं तो गोवर्धन कूं जाऊ मेरी वीर।
सात कोस की दै परिक्रम्मा मानसी गंगा नहाऊँ मेरी वीर॥

मुड़िया पूनौं का नाम कैसे पड़ा?

चैतन्य महाप्रभु के संप्रदाय के शिष्य विद्वान आचार्य सनातन गोस्वामी से है। जिनका निधन हो जाने पश्चात उनके शिष्यों ने शोक में अपने सिर मुड़वा कर कीर्तन करते हुए मानसी गंगा की परिक्रमा की थी। मुड़े हुए सिरों के कारण शिष्य साधुओं को मुड़िया कहा गया और क्यों कि उस दिन पूनौं यानी (पूर्णिमा) का दिन था, जिसके कारण इसका नाम मुड़िया पूनौं कहा जाने लगा, सनातन गोस्वामी और उनके भाई रूप गोस्वामी गौड़ देश

प्राचीन बंगाल के शासक हुसैन शाह के दरवार में मंत्री थे। चैतन्य महाप्रभु के भक्ति-सिद्धांतों से प्रभावित होकर वे दोनों मंत्री पद छोड़कर महाप्रभु के आदेश पर वृन्दावन आ गये और यहां उन्होंने चैतन्य महाप्रभु से दीक्षा प्राप्त की और उनके शिष्य हो गये। चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें यह आदेश दिया कि वे श्रीकृष्ण के समय के तीर्थ स्थलों की खोज करें और उनके प्राचीन स्वरूप को प्रदान करें, साथ ही श्रीकृष्ण की भक्ति का प्रचार-प्रसार करें। चैतन्य महाप्रभु के आदेशानुसार दोनों भाईयों ने ब्रज के वन-उपवन और कुंज निकुंजों में भ्रमण करके भगवान श्रीकृष्ण की लीला स्थलियों की खोज करके उन्हें पुनः जीवित किया, वे दोनों घर-घर जाकर रोटी की भिक्षा ग्रहण करते और महामंत्र का जाप करते रहते थे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

इस प्रकार महामंत्र का कीर्तन कर कृष्ण भक्ति का प्रचार प्रसार करते-करते सनातन गोस्वामी जब गोवर्धन आये तो उन्होंने मानसी गंगा के किनारे स्थित चकलेश्वर मंदिर के निकट अपनी कुटिया बना ली और वहीं रहने लगे वह नित्य प्रति गिरिराज गोवर्धन की परिक्रमा किया करते थे। वह नित्य प्रति मानसी गंगा में स्नान करते थे। जब वह अत्यंत वृद्ध और अशक्त हो गये तब भी उन्होंने नित्य नियम को नहीं छोड़ा। कहा जाता है कि भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें साक्षात दर्शन देकर गिरिराज पर्वत की एक शिला पर अपने चरण चिन्ह अंकित कर बाबा को दिया और कहा कि बाबा अब आप इसकी ही परिक्रमा कर लेंगे तो गिरिराज गोवर्धन की परिक्रमा पूरी हो जायेगी। यह गिर्राज शिला आज भी वृन्दावन के राधा दामोदर मंदिर में स्थापित है तथा इसकी पूरे वर्ष भर श्रद्धालु परिक्रमा करते हैं।

मुड़िया पूर्णिमा मेला क्यों मनाया जाता है?

सनातन गोस्वामी का निधन अब से 469 वर्ष पूर्व संवत् 1611 में आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा को हुआ था। उनके निधन पर उनके शिष्य अनुयायियों ने सिर मुड़वाकर चकलेश्वर मंदिर से शोभायात्रा के रूप में निकाली थी, वहीं परम्परा में आज भी उनके शिष्यों व अनुयायियों के द्वारा प्रत्येक वर्ष एक शोभायात्रा निकाली जाती है। आज यह विशाल मेला का रूप ले चुका है और परिक्रमा मार्ग खचाखच भरा रहता है। जिसके कारण जिला प्रशासन को इस राजकीय मेले की व्यापक व्यवस्थाएं करनी पड़ती हैं।

इस दिन श्रीचैतन्य महाप्रभु जी के चकलेश्वर स्थित मंदिर के सामने परमपूज्य सनातन गोस्वामी जी की समाधि स्थल पर अधिवास, संकीर्तन का शुभारम्भ किया जाता है। इसके पश्चात एक शोभायात्रा सांय के समय निकलती है, तथा एक अन्य शोभायात्रा सुबह राधाश्याम सुन्दर मंदिर से निकाली जाती है इसके मुड़िया महन्त राम कृष्ण दास जी ने बताया कि मंदिर में 24 जून से भागवत का पाठ चल रहा है 03 जुलाई को सुबह 10 बजे अधिवास के पश्चात शोभायात्रा निकाली जायेगी यहां पर सनातन गोस्वामी की भजन स्थली है तथा इसी स्थान पर उनका शरीर पूरा हुआ था, उनकी स्मृति में यह शोभायात्रा निकाली जाती है जिसमें भक्त कीर्तन करते हुए नाचते गाते निकलते हैं। दूसरी शोभायात्रा चकलेश्वर महाप्रभु मंदिर से सायं के समय निकलती है इस मंदिर के महन्त श्री गोपाल दास जी महाराज ने बताया कि इस वर्ष 1 जुलाई को अधिवास, 2 जुलाई को अखण्ड हरिनाम संर्कीतन, 3 जुलाई को सुबह गुरू पूजन दोपहर को साधु सेवा ब्राह्मण भोजन भण्डारा और सांय 5 बजे से मुडिया परिक्रमा निकाली गई। जिसमें आश्रम के साधु-संत झांझ, मंजीरे, हारमोनियम व ढोलक की लय ताल पर नृत्य करते हुए निकले।

रघुनाथ दास जी गोस्वामी की गद्दी राधाकुंड में पूज्य सनातन गोस्वामी के निकुंज लीला में प्रवेश करने के बाद गुरू भक्ति की याद में मुड़िया पर्व को मनाया जाता है। इसमें राधाकुंड-श्यामकुंड से सनातन गोस्वामी के चिन्हों को लेकर साधु-संत इस शोभायात्रा में नाचते कूदते हुए शामिल होते हैं और मानसी गंगा और गिरि गोवर्धन की परिक्रमा करते हैं।

इस दिन ब्रज क्षेत्र में हर मंदिर और आश्रम में लोग अपने-अपने गुरू की पूजा अर्चना करने पहुंचते हैं।

मुड़िया पूर्णिमा को गुरू पूर्णिमा के रूप में भी जाना जाता है। पूरे ब्रज क्षेत्र में प्रत्येक मंदिर और आश्रम में लोग अपने-अपने गुरू की पूजा अर्चना करते हैं तथा गुरू स्थान की भी पूजा करते है और इस दिन जगह-जगह भंडारे लगते हैं जहां श्रद्धालु प्रसाद ग्रहण करते हैं और पूर्ण भक्ति भाव और आस्था के साथ अपने-अपने गुरू से आर्शीवाद ग्रहण करते हैं। कुछ लोग इस दिन को पवित्र मान कर अपने जीवन को सफल व पूर्व जन्म को सुधारने व भगवत प्राप्ति का मार्ग पाने के लिए गुरू बनाते है और उनकी पूजा अर्चना करते हैं तथा गुरू को उपहार स्वरूप फल, वस्त्र आदि भेंट करते हैं। गुरू द्वारा बताये मार्ग पर चल कर भजन पूजा शुरू करते हैं।

लाखों परिक्रमार्थी गोवर्धन पहुंचे

इस वर्ष मुड़िया पूर्णिमा 3 जुलाई को मनाई गई, श्रद्धालुओं ने मानसी गंगा में स्नान कर परिक्रमा शुरू की। इस राजकीय लक्खी मेले को देखते हुए जिला प्रशासन प्रत्येक वर्ष श्रद्धालुओं की बढ़ती संख्या को लेकर व्यवस्था करता है। सम्पूर्ण मेला क्षेत्र को विभिन्न सैक्टरों में बांटकर पेयजल, सफाई, शुद्ध खाद्य पदार्थ, विद्युत व्यवस्था, सुरक्षा व्यवस्था, दुग्ध आपूर्ति, यातायात व्यवस्था का व्यापक इंतजाम जिला प्रशासन द्वारा किया जाता है। पूरे मेला क्षेत्र में पुलिस चौकी तथा वाच टावर के माध्यम से नियंत्रण की व्यवस्था की जाती है। उत्तर प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम की घोषित व्यवस्थाओं के अभाव में प्राइवेट बसों द्वारा यात्रियों को भूसे की तरह भर कर मेला स्थल तक पहुंचाया जाता है यात्री छतों पर यात्रा करने को मजबूर होते है। जगह-जगह बैरियर लगे होने के कारण यात्रीयों को परिक्रमा के अलावा अधिक पैदल चलना पड़ता है।

गोवर्धन परिक्रमा मार्ग में कुसुम सरोवर, राधाकुण्ड, जतीपुरा आदि अनेक दर्शनीय स्थल पड़ते हैं तथा यह सम्पूर्ण ब्रज क्षेत्र का एक मात्र धार्मिक आस्था का केन्द्र है। गोवर्धन मथुरा से 26 किलोमीटर की दूरी पर है, गोवर्धन में पूछरी का लौठा, अप्सरा कुण्ड, कृष्ण दास का कुआ, सुरभि कुण्ड जैसे रमणीक स्थल हैं। गोवर्धन की तलहटी में सूरदास, कुंभनदास आदि अष्ट छाप के काावियों, सखाओं एवं सिद्ध भक्तों के स्थल आज भी आस्था के केंद्र बने हुए हैं।

प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी ब्रज क्षेत्र के प्रसिद्ध गोवर्धन गिरिराज महाराज की मुड़िया पूर्णिमा मेला में बीते वर्ष से अधिक संख्या में श्रद्धालु यहां पहुंचे। अनुमान के अनुसार इस बार लगभग एक करोड़ श्रद्धालु मुड़िया पूर्णिमा मेला पर गिरिराज महाराज की परिक्रमा की होगी। इतनी बड़ी संख्या में श्रद्धालुओं के गिरिराज गोवर्धन पहुंचने को लेकर जिला प्रशासन ने व्यापक व्यवस्थाएं कीं। मुड़िया पूर्णिमा मेले में बड़ी संख्या में वाहनों के आवागमन को देखते हुए पार्किंग स्थलों के लिये अलग से जगह-जगह व्यवस्था की गयी। निजी पार्किंग स्थलों के लिये लोक निर्माण विभाग द्वारा पार्किंग के लिये ठेकेदारों को स्थान उपलब्ध कराये गये तथा उसकी रूपरेखा तैयार की गयी। इस अवसर पर गोवर्धन में 24 घंटे विद्युत आपूर्ति के शासन द्वारा निर्देश दिये गये थे। मानसी गंगा पर मेले के दौरान प्रकाश व्यवस्था को अनवरत किये जाने के लिये जैनरेटर सैट लगाये गये सड़क मार्ग पर प्रकाश व्यवस्था के लिये गोवर्धन तथा राधाकुण्ड नगर पंचायतों को पर्याप्त लाइट लगवाने के निर्देश भी जिलाधिकारी मथुरा पुलकित खरे द्वारा दिये गये।

★★★

मथुरा डॉक पंजीयन संख्या-070/2022-24 पंजीयन संख्या UPHIN 2003/11917

उत्तर प्रदेश ब्रज तीर्थ विकास परिषद

upbtvp

सांस्कृतिक धरोहर की पुनर्प्रतिष्ठा

UP Braj Teerth Vikas Parishad has been constituted under the Uttar Pradesh Braj Niyojan Aur Vikas Board (sanshodhan) Adhiniyam 2017 (U.P. Act No. 3 of 2017) for the preparation of a plan for preserving, developing and maintaining the aesthetic quality of Braj heritage in all hues - cultural, ecological and architectural, co-coordinating and monitoring the implementation of such plan and for evolving harmonized policies for integrated tourism development and Heritage conservation and management in the region, giving advice and guidance to any department/local body/authority in the district of Mathura in respect of any plan, project or development proposals which affects or is likely to affect the heritage resource of the Braj Region and for matters connected here with or incidental there to.